Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक मुलाकात

मेरे उजड़े दयारे वतन के अपने लोगों से

चरणजीत लाल सहगल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एक मुलाकात

मेरे उजड़े दयारे वतन
के अपने लोगों से

चरणजीत लाल सहगल

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu.
Acc No. 5352
Dated 29/3/2024

2011

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

© Charanjeet Lal Sahgal

प्रथम संस्करण 2011

Hindi Translation

by

Navade Akbar

Ex-Editor Hindi Section

Pengun Books India

चरणजीत लाल सहगल

309 - A, Gandhinagar

Jammu Tawi

Pincode : 180 004

Phone : 0191-2430836

Mobile : 09469012230

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेरी माँ

सुखी अम्मा

की याद में

जिन्होंने अपनी लाज वचाने के लिए अपनी वहु के

साथ किशन गंगा नामक नदी में समाधि ले ली

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

विषय-सूची

	पेश लफ़्ज़	9
1-	चौदहवीं कारवाने-अमन का मुलाकाती जो लौट न सका	11
2-	तीन माहे-रमज़ान की ख़ूनी फ़ज्र	22
3-	मेरी वेकरारी अपनों से मिलने की, दुख की घड़ी में	32
4-	अचानक तैयारी	39
5-	रवानगी	43
6-	लाहौर पहुंच कर	45
7-	लाहौर दूसरा दिन	57
8-	लाहौर से इस्लामावाद	63
9-	सिलसिला-ए-मुलाक़ात	68
10-	वापसी	81

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पेश लफ़्ज़

'एक मुलाक़ात' में वुनियादी तौर पर चरणजीत सहगल की इस्लामावाद में तीन दिन की मसरूफ़ियात का ज़िक्र है। ये दिन उन्होंने पाकिस्तान के ख़ूवसूरत दारुलख़िलाफ़ा में 19-20 और 21 दिसंवर को गुज़ारे थे। ये मसरूफ़ियात भी इस्लामावाद की कम और मुज़फ्फ़रावाद से आए हुए लोगों से मुलाक़ातों के वारे में ज़्यादा थी।

वहां रहते हुए, जाते और आते हुए, इसमें पुरानी यादों की झलकियां हैं जो मुज़फ्फ़रावाद से वावस्ता थीं। पाकिस्तान हिस्से के जम्मू कश्मीर में 2005 अक्तूवर में जो भयानक ज़लज़ला आया था, और जिसमें 73,000 से ज़्यादा लोगों की जानें तल्फ़ हुई उस वक़्त भी उनका ध्यान मुतास्सिरशुदा लोगों की तरफ़ था जिन से उनका लगाव था। श्रीनगर से मुज़फ्फ़रावाद का रास्ता खुलने के वाद वहां चलने वाले चौदहवें कारवां में वो नहीं जा पाए। उनके जो रिश्तेदार उसमें जा पाए उन्हें वो वहुत ख़ुशनसीव समझते थे कि वो अपनी जन्मभूमि को 58 वरस वाद जा रहे थे जहां वो अपने पुराने दोस्तों से ही नहीं वल्कि उन क़रीवी रिश्तेदारों से मिल कर इन्तहाई ख़ुश हो रहे थे। मगर उनकी ख़ुशियां सिर्फ़ एक दिन के लिए थीं। 8 अक्तूवर को, जिस मकान में उनका क़याम था, ज़लज़ले के एक झटके से ढेर हो गया। उनमें से वस्तीराम टंडन वहीं जां-वहक़ हो गए और वाक़ी वमुश्किल मल्वे के ढेर से निकाले जा सके।

इसी तरह इस किताव्वे में उन्होंने मुज़फ्फ़रावाद की वो यादें ताज़ा की हैं जव वो अपनी वीवी सावित्री के साथ 1989 में वहां गए थे और जव उन्होंने पाकिस्तानी कश्मीर के दारुलख़िलाफ़ा की पूरी आवो-ताव देखी थी। वो यादें सत्रह वरस वाद इस्लामावाद आ कर उन्हें झिंझोड़ रही थीं।

मुज़फ्फ़रावाद और वहां के वासियों की याद उन्हें इसलिए लगातार सताती है कि वो न सिर्फ़ उनकी जन्मभूमि थी वल्कि अक्तूवर 1947 में क़वायली हमले के वाद वाक़ी हिंदुओं और सिखों के हिजरत करने के वाद जो एक हज़ार दिन उन्होंने वहां गुज़ारे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थे, वो उनकी ज़िंदगी का नाक़विले-फ़रामोश हिस्सा हैं। जब कबायली हमलावरों ने हिंदुओं और सिखों का वेतहाशा क़त्ल कर के लाशों के अंबार लगा दिए थे, तब चरणजीत सहगल न भाग सका न क़त्ल हुआ। उन्हें राक्षसों की नगरी में इंसान भी मिल गए जो उन्हें मौत के चंगुल से छुड़ा कर उनके जद्दी गांव कमलकोट में वापस ले आए। दिलावर ने, जिन्हें वो चचा कहते हैं, अपने बेटे की कुर्वानी दे कर उन्हें मौत के मुंह से निकाला था। उन्हें वो कैसे भूल सकते हैं? उसके बाद दिसंबर 1950 तक जो दिन उन्होंने मुज़फ़्फ़रावाद में गुज़ारे थे, उनमें इंसानियत, मुहब्बत, शफ़क़त की बहुत सी मिसालें उनके ज़हन में पैवस्त हो गई हैं। जब उनकी मां ने दरिया में कूद कर कवायलियों के हाथों से अपनी इज़्ज़तो-नामूस को बचाया, तो उसके बाद एक वुज़ुर्ग मुसलमान औरत ने इतना मादरी प्यार दिया जिससे किसी हद तक वो मां की जुदाई का सदमा बर्दाश्त कर सके। कुछ वुज़ुर्गों ने अपने पिदराना सुलूक से उन का दिल जीत लिया। वो ख़ुद एक क़ाविले-एहतेराम उस्ताद का रोल निभाते रहे। बहुत से लड़के और लड़कियां जिनको उन्होंने पढ़ाया था, बाद में ऊंचे घरों और ओहदों तक पहुंचे, और वो आज भी उनके ज़ेरे-अहसान हैं और उनका एहतेराम करते हैं।

सहगल की आपबीती में तारीख़ी तसलसुल नहीं। इस्लामाबाद के अपने आख़री सफ़र से पहले और उसके दौरान जो यादें जब ताज़ा हो जातीं और जो जज़्बात जब उमड़ आते, उन्हें क़लमबंद कर डाला। वो अहले-क़लम भी नहीं, जो अपने जज़्बात में कोई अदबी जाज़वियत पैदा कर पाते। लेकिन ऐसे जज़्बात की अहमियत से इंकार नहीं किया जा सकता जो इंसानियत की बुलंदियों को छू लेते हैं। ये रिश्ते उन लोगों के दरम्यान हैं जिन के मज़हब और क़ौमियतें अलग-अलग हैं मगर वो ख़ूनी रिश्तों से भी ज़्यादा गहरे और पाक हैं जो अल्फ़ाज़ की गिरफ़्त में नहीं आते हैं।

81 बरस की उम्र में वो ये उम्मीद लगाए बैठे हैं कि हिंदुस्तान और पाकिस्तान के लोगों के दरम्यान नफ़रत और बदएतमादी की सब दीवारें टूट जाएंगी और उन के दरम्यान बाहमी रिश्ते उसी तरह बहाल हो जाएंगे जो उनके और मुज़फ़्फ़रावाद के लोगों के बीच बने हुए हैं। न जाने इस ख़्वाब की ताबीर कब होगी मगर ये एक इन्तेहाई हसीन ख़्वाब है जिस में दोनों पड़ोसियों की ख़ुशहाली और अज़मत पिन्हां है। यही वजह है कि सहगल के इस किताब्चे पर उन्हें मुबारकबाद दी जाए।

—बलराज पुरी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

1

चौदहवीं कारवाने-अमन का मुलाकाती जो लौट न सका

जब श्रीनगर-मुज़फ़्फ़राबाद बस चलाने का सिर्फ़ उसूली तौर पर ही फ़ैसला हुआ था और इसके मुताल्लिक किसी और अमल और दीगर लवाज़ेमात तय होने बाकी थे तब से ही मुज़फ़्फ़राबाद, हटियां दोपट्टा और दूसरे मुल्हिका गावों से उजड़ कर आए हुए लोगों में एक मुसर्रत की लहर मौजज़न हो गई थी कि वो दिन कब आएगा जब वो मजबूरी में छोड़ी हुई ज़ादबूम की मिट्टी से बोसो-किनार हो सकेंगे। वो सभी इस ख़ुशख़बरी को सुन कर एक जगह इकट्ठे हुए। उन्होंने मुसर्रत और शादमानी से एक दूसरे से बग़लगीर होते हुए मिठाइयां भी बांटी। ये सभी सत्तर बरस के बूढ़े या इससे भी ज़्यादा उम्र के थे जिनमें अपनी ज़ादबूम की एक बार ज़ियारत करने का जज़्बा थमने का नाम ही नहीं ले रहा था। अगर उनका बस चलता तो वो पंख लगाकर उड़ जाने के लिए भी तैयार थे। उनकी उम्र कुछ भी रही हो वो इस आरज़ू को हासिल करने के लिए सतरे-बतरे दिखाई दे रहे थे।

मीडिया भी उनके इस जज़्बे की क़द्र करते हुए उनकी सुध लेने पहुंचा और उसने उनके तअस्सुरात को उजागर किया। अस्सी-साला भाग सिंह जो एक ड्राइवर हैं, उनका कहना था कि गाड़ी चाहे रावलपिंडी से चले या श्रीनगर से, खाना नंदराम के ढाबे पर ही खाते थे। उसके ढाबे की देसी घी के तड़के वाली दाल, मक्की की रोटी मक्खन वाली, साथ अनारदाने की चटनी और लस्सी का अपना ही ज़ायक़ा था। जो एक बार खाता था उम्र भर याद रखता था। उन्हें पक्का विश्वास था कि महाराजा की फ़ौज उनकी पूरी हिफ़ाज़त करेगी। इस भरोसे वो गांव में रहे, लेकिन जब गोलियां चलीं तो फ़ौज का कोई नामो-निशान नहीं था। वो रहमतुल्लाह ख़ान ही था जिसने अपनी जान की पर्वाह न करते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हुए उनकी जान बचाई। उसका कहना था अगर कभी मौका मिलता तो रहमतुल्लाह ख़ान का शुक्रिया तो अदा कर आता। ये उसकी आख़री ख़्वाहिश है। इसी तरह इक्यासी साल की शांति देवी की भी आख़री ख़्वाहिश है कि एक बार किशन गंगा के संगम पर डुबकी लगाने का बड़ा मन करता है, पर चलने से लाचार हूं। वो जाने वालों से कह रही थीं मेरी दुआएं और नेक ख़्वाहिशात वहां के लोगों के लिए ले जाना। हरेक उजड़ कर आए हुए बुज़ुर्ग की अपनी अलग-अलग ख़्वाहिशें हैं जिनको बयान करते-करते एक लंबी दास्तान बन जाएगी। इनका एक वफ़द इस आरज़ू के हुसूल के लिए इल्तेजा करने की गरज़ से वज़ीरे-आला जनाब मुफ़्ती मुहम्मद सईद की ख़िदमत में भी हाज़िर हुआ था। उनको मेरी किताब 'सलाम दयारे-वतन' जिस पर बाबू किशोरी लाल सहगल ने लिखा था "मजबूरी में उजड़ कर आए हुए मुज़फ़्फ़राबादियों की अपनी ज़ादबूम जाने की इल्तेजा के साथ" पेश की। तब मुफ़्ती साहब ने उनसे दरियाफ़्त किया था कि ये चरणजीत लाल सहगल कौन है, ऐसे लोगों को ही पहली बस में सफ़र करना चाहिए था। वफ़द ने वज़ीरे-आला से इस्तेदआ की कि उन्हें जाने की इजाज़त मिलनी चाहिए। वो ऐसे बहुत से बुज़ुर्गों को लेकर अपनी ही बस में सरहद के उस पार जाएंगे जिनको सरहद की दूसरी जानिब उनके अज़ीज़ और अहबाब उनको ख़ुद लेने के लिए मौजूद होंगे। यहां ही किशोरी लाल सहगल जिसने सारी उम्र गवर्मेंट ट्रांस्पोर्ट की बस चलाने की नौकरी की थी का कहना था कि वो उस बस को लेकर जाएगा। क्योंकि सब रास्ते उसके जाने-पहचाने थे। उड़ी से आगे ब्राहमनादा मोड़ के साथ ही इस्लामाबाद आता है, उसके आगे लाल पुल है जिसे अमन सेतु या ज़ीरो प्वाइंट कहते हैं। उसके आगे चिकोठी फिर ऊपी। उसके बाद चिनारी, पुल नीली फिर चिकार सरां चट्ठा। आगे कहूदा बाग़ से होकर गढ़ी जिसकी दूसरी जानिब हटियां दोपट्टा है। उसके बाद मझोली, छह किलोमीटर आगे टनाली, उसके आगे मसबड़ी मोड़, फिर मुज़फ़्फ़राबाद का बस अड्डा और उसके साथ ही कस्टम पोस्ट। ये नक़्शा किशोरी लाल सहगल ने अपने हाथ की हथेली पर बनाकर दिखाया था। इस सफ़र के चप्पे-चप्पे से वाकिफ़ किशोरी लाल का कहना था कि बस में झटका हरगिज़ नहीं लगना चाहिए क्योंकि काबिल ड्राइवर वही है जो सवारी को झटका न लगने दे। लेकिन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अफ़सोस कि बावू किशोरी लाग सहगल की रूह कारवाने-अमन शुरू होने के ग्यारह दिन पहले ही जिस्मे-फ़ानी को जम्मू छोड़ कर आख़री ख़्वाहिश पूरी करने के लिए हटियां दोपट्टा की फ़ज़ाओं में परवाज़ कर गई।

ये चौदहवां कारवाने-अमन था जो यकुम माहे-रमज़ान मुताविक़ 6 अक्तूवर, 2005 को श्रीनगर से रवाना होकर उसी दिन शाम को मुज़फ़्फ़रावाद पहुंच गया था। इस कारवाने-अमन में पहली वार आठ ग़ैर-मुस्लिम मुसाफ़िरों जगदीश टंडन, सुभाष टंडन, वस्तीराम टंडन, अवतार सिंह, गुरचरण सिंह, जमैत सिंह, सनमुख सिंह और 88-साला कृपाल सिंह को इजाज़त दी गई थी। जवकि पहले कारवाने-अमन को 17 अप्रैल, 2005 को सरदार मनमोहन सिंह प्रधान मंत्री ने हरी झंडी दिखा कर रवाना किया था। जव वस्तीराम टंडन को ये इजाज़तनामा मौसूल हुआ तो उस वक़्त उसका भाई जगदीश लाल टंडन पुंछ गया हुआ था। उसने टेलीफ़ोन करके उसको ताकीद की कि वो जल्दी जम्मू आ जाए ताकि वो अपनी ज़ादवूम की ज़ियारत कर सकें और 58 साल पहले विछड़े हुए अपने रिश्तेदारों, पड़ोसियों और अहवाव से मिल सकें। गो वस्तीराम की सेहत कुछ ठीक नहीं थी, वो गठिया की शिद्दत से चलने-फिरने से क़ासिर था और लाठी लेकर मुश्किल से चल पाता था लेकिन उसको इस सफ़र पर रवाना होने की इस कदर चाहत थी कि वो ख़ुशी से उछल रहा था। उसने सफ़र पर रवाना होने के लिए कई दिन पहले से ही तैयारी कर रखी थी। अपना सूटकेस रवाना होने के लिए विल्कुल तैयार कर रखा था जिसमें उसका अपना ज़रूरी सामान कम था और अपने मिलने वालों के लिए तहाइफ़ और नज़राना जात ही ज़्यादातर थे। उसकी ख़ुशी का कोई ठिकाना ही न था। उसके भाई जगदीश टंडन ने उससे कहा था कि ये माहे-रमज़ान की पहली तारीख़ का कारवाने-अमन है। इस माह के दौरान मुस्लिम भाई रोज़े रखते हैं, इसलिए हमारे मुस्लिम रिश्तेदारों और अहवाव को हमारे जाने से इस वक़्त दिक़्क़त होगी, इसलिए हम इससे अगले वाले कारवाने-अमन में चलेंगे जव माहे-रमज़ान भी ख़त्म हो जाएगा। लेकिन वस्तीराम ने अपने भाई की दलील को क़तअन कुवूल करने से इंकार करते हुए अकेले ही जाने की ज़िद शुरू कर दी। उसकी इस हठधर्मी से ऐसा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

महसूस हो रहा था कि उसकी ज़ादबूम उसको अपनी आग़ोश में लेने के लिए पुकार रही है। उन्होंने अपने सौतेले भतीजे मक़वूल को भी हटियां दोपट्टा फ़ोन से अपने आने के लिए दरियाफ़्त किया। उसने भी उन्हें आने के लिए पुरख़ुलूस दावत दी। वहरहाल वस्तीराम के जाने की वेतावी को देखते हुए उनके अहले-ख़ाना ने उन तीनों को हंसी-ख़ुशी हटियां दोपट्टा जाने के लिए रुख़्सत करते हुए उनकी ख़ैरियत से वापसी की दुआ की।

वस्तीराम 1947 से पहले हटियां दोपट्टा का रहने वाला था। ये क़स्वा मुज़फ़्फ़रावाद से श्रीनगर की जानिव जाने वाली शाहराह पर 22 किलोमीटर के फ़ासले पर वाक़े है और दरियाए-झेलम के दोनों किनारों पर आवाद है। इस क़स्वे में दो दौलतमंद ख़ानदान माने जाते थे, एक सत्ते शाह का ख़ानदान और दूसरा चीने शाह का ख़ानदान। वस्तीराम टंडन सत्ते शाह के ख़ानदान से थे। उनके वालिद की एक वहन रूमा देवी श्री गोकुल चंद विज से व्याही हुई थी जिसकी तीन वेटियां थीं जिनके नाम थे शांति देवी, पुष्पा देवी और कुंती देवी। उनकी मां की वफ़ात के वाद गोकुल चंद विज ने दूसरी शादी प्रेमा देवी से की थी जिसके वतन से दो लड़के कांशी राम और मोहन लाल हुए थे। शांति देवी की शादी राम लाल सहगल से हुई थी जिसके पांच वेटे और चार वेटियां हैं, पुष्पा देवी की शादी मास्टर करम चंद खटाई वाले से हुई थी, और कुंती देवी की शादी राम लाल आम्ला से हुई थी।

जब 22 अक्तूवर, 1947 को क़वायलियों ने रामकोट के रास्ते से रियासत जम्मू-कश्मीर पर हमला किया था, उस वक़्त वहां रियासत की हिफ़ाज़त महाराजा हरि सिंह ने जिन फ़ौजियों को सौंपी हुई थी, वो पहले से तय किए हुए मंसूवे के मुताविक़ क़वायलियों का हमला होते ही उनसे मिल गए। उनकी इस ग़द्दारी से वहां एक भी गोली चले वग़ैर क़वायली इन फ़ौजियों की मदद से किशन गंगा के पुल तक वग़ैर किसी रुकावट के पहुंच गए थे। पुल पर संतरी को गोली मारने के वाद वो वग़ैर किसी मज़ाहेमत के मुज़फ़्फ़रावाद शहर में दाख़िल होने में कामयाव हो गए। उनकी दूसरी टुकड़ी नलोछी के रास्ते से जोहला पुल पार करके दोमेल की तरफ़ वढ़ने लगी जहां पहली टुकड़ी मुज़फ़्फ़रावाद में मारकाट

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और तवाही मचाने के वाद उनसे जा मिली। इसके वाद उन क़वायली हमलावारों को हटिया दोपट्टा में कुछ मज़ाहेमत का सामना करना पड़ा। लेकिन उन्होंने मुज़फ़्फ़रावाद की तरह ही मारकाट और लूट का वाज़ार गर्म करते हुए कई हिंदू नौजवानों को मौत के घाट उतारना शुरू कर दिया। इस अफ़रातफ़री के आलम में वहुत सी मस्तूरात ने अपनी इज़्ज़त आर आवरू की हिफ़ाज़त करते हुए दरियाए-झेलम में जलसमाधि ले ली थी। तव मुझे मालूम हुआ था कि मेरे सौतेले भाई गया चंद सहगल की वड़ी लड़की राम प्यारी के ख़ाविन्द को जव उन लोगों ने गोली का निशाना वनाया था तो उसने अपने शीरख़्वार वच्चे को गले से लगा कर जलसमाधि ले ली थी। वहां वहुत हिंदू मर्द और औरतें जो इस मारकाट से वच निकले थे, उनको मुकामी मुसलमान पड़ोसियों ख़ासकर सुलतान लवासी साहव ने अपनी पनाह में ले लिया था।

जव अप्रैल **1948** के माह में सभी वचे-खुचे हिंदू मर्द, औरतों, वच्चों को मुज़फ़्फ़रावाद से और वाक़ी इलाक़ातजात से रेडक्रॉस की निगरानी में इकट्ठा किया गया ताकि उनको हिंदुस्तान भेजा जा सके तो वहुत से हिंदू वग़ैर किसी हील-हुज्जत के कैंप की शक्ल में इकट्ठे हो गए थे। लेकिन वहुत कम ऐसे भी थे जिन्होंने इस सहूलियत को कुवूल करने से इन्कार कर दिया। क्योंकि उनके ज़हन में एक डर पैदा किया गया था कि हिंदुस्तान ले जाने के वजाय उन्हें रास्ते में क़त्ल कर दिया जाएगा। उनमें गोकुल चंदोज के दोनों लड़के कांशी राम और मोहन लाल भी थे जिनकी उम्र उस वक़्त सोलह साल और तेरह साल थी। वल्कि उस वक़्त उनके वहनोई राम लाल सहगल ने भी उन दोनों को हिंदुस्तान चलने के लिए ताकीद की थी। लेकिन उनके ज़हन में जो डर वैठा हुआ था उसकी वजह से उन्होंने इंकार कर दिया। इन दोनों भाइयों ने हटियां दोपट्टा में रहते हुए इस्लाम क़ुवूल कर लिया था। इस तरह कांशी राम शेख़ गुलाम रसूल वन गया और मोहन लाल शेख़ अव्दुर्रशीद हुआ। उन्होंने वहीं सरदार लड़कियों से शादी कर ली थी। इसी तरह वस्तीराम का एक और सौतेला भाई मंकतराम टंडन भी मनकतुल्लाह ख़ान के नाम से वहां रह रहा था।

वहुत अर्से तक इन रिश्तेदारों में कोई नामा-पयाम का सिलसिला ना के वरावर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रहा। इस दौरान शेख़ गुलाम रसूल उर्फ़ कांशी राम के दो वेटे मुहम्मद मकबूल और फ़ारूक अहमद और पांच वेटियां पैदा हुई। शेख़ अब्दुर्रशीद के एक वेटा तारिक़ और चार वेटियां पैदा हुई। ये 1980 का अक्तूवर माह था। शेख़ गुलाम रसूल उर्फ़ कांशी राम अपने बिछड़े रिश्तेदारों से फिर मिलने की आरज़ू ले कर हिंदुस्तान आया था। उस वक़्त उसका भांजा शक्ति सहगल उसको वाहगा वॉर्डर से अपनी कार में कठुआ लाया था और वहां से वो जम्मू अपनी वड़ी वहन शांति देवी के पास़ ठहरे थे। शेख़ गुलाम रसूल ने कोई दो माह तक हिंदुस्तान में कयाम किया था और अपने सभी रिश्तेदारों से मिले थे। कुछ दिन वो जगदीश लाल टंडन और वस्तीराम टंडन अपने सौतेले भाइयों के यहां भी कयामपिज़ीर रहे। वो अपनी मासी शांति देवी को मिलने के लिए श्रीनगर भी गए। नीज़ 30 नवंबर को अपने भांजे रतन लाल सहगल की शादी में शामिल हो कर मामूं की मिलनी भी हासिल की थी।

शेख़ गुलाम रसूल उर्फ़ कांशी राम की इस मुलाकात के वाद नामा-पयाम का सिलसिला मुसलसल जारी रहा और इन रिश्तेदारों में आपसी चाहत की चाश्नी वढ़ती गई और जब श्रीनगर मुज़फ़्फ़रावाद के दरम्यान बस सर्विस 7 अक्तूबर, 2005 को शुरू हुई तो वस्तीराम टंडन का अपने 58 साल कब्ल विछड़े रिश्तेदारों से मिलने का इश्तियाक़ ठाठें मारने लगा। उसने अपने भाई जगदीश लाल के साथ हटियां दोपट्टा जाने की उस दिन से ही तैयारी शुरू कर दी लेकिन इस दौरान शेख़ गुलाम रसूल 2003 में फ़ौत हो गया था और उसके छोटे भाई शेख़ अब्दुर्रशीद की भी 2005 के शुरू में ही वफ़ात हो गई थी। अब इन रिश्तेदारों का नामा-पयाम का सिलसिला शेख़ गुलाम रसूल के वड़े वेटे मुहम्मद मकबूल की वसातत से कायम हो चुका था। मुहम्मद मकबूल अरव ममालिक में जाकर काफ़ी रुपया कमा लाया था और अव वहां अपनी टैक्सी चलाता था।

जब वस्तीराम टंडन, जगदीश लाल टंडन और उसका बेटा सुभाष टंडन कारवाने-अमन से 6 अक्तूबर, 2005 की शाम को अपनी जन्मभूमि हटियां दोपट्टा पहुंचे तो उनका इस्तिकबाल उनके रिश्तेदारों, पड़ोसियों और अहबाब ने पुरख़ुलूस तौर पर निहायत ही गर्मजोशी से किया। उनको फूलों के हार पहना कर जुलूस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की शक्ल में उनके घर ले जाया गया। जिस तरह बुझने से पहले दिये की लौ तेज़ हो जाती है उसी तरह से बस्तीराम टंडन भी जवानी के जोश में उछल-उछल कर शायरी में बोलने लगा। ये दरिया (झेलम), ये सब्ज़ाज़ार नज़ारे ये हमारा वतन है। उसके इस तर्ज़े-कलाम से सभी हैरान थे कि उसमें इस क़दर जोश और वलवला कहां से आ गया है जो हटियां दोपट्टा पहुंचने पर किलकारियां मार रहा है।

उस दिन ये सफ़र की थकान से जल्दी ही सो गए लेकिन दूसरे दिन 7 अक्तूबर को इनका सिलसिला-ए-मुलाकात अपनों से सारा दिन चलता रहा। अपनी जन्मभूमि को 58 साल बाद देख कर बहुत सी पुरानी यादें ताज़ा हो रही थीं। इस तरह ये दिन तो इनका निहायत ही हश्शाश-बश्शाश और मुलाक़ातों की चाश्नी से गुज़रा। लेकिन ये सब ख़ुशियां इनके नसीब में सिर्फ़ एक दिन के लिए थीं। 8 अक्तूबर की फ़ज्र को पाकिस्तान के वक़्त के मुताबिक़ आठ बज कर 52 मिनट पर एक भयानक और हौलनाक ज़लज़ले ने इनको अपनी आग़ोश में ले लिया। उस वक़्त जगदीश लाल गुसलख़ाने में गुसल ले रहा था। उसका लड़का सुभाष और बाक़ी लोग सहन में थे। बस्तीराम, तारिक़, फ़ारूक़ अहमद की बीवी और मुहम्मद मक़बूल का सात साल का लड़का अंदर कमरे में थे। आन की आन में ये मकान ढेर हो गया। सुभाष और बाक़ी लोग ज़ख़्मी हालत में सहन से निकलने में कामयाब हो गए। लेकिन जगदीश लाल गुसलख़ाने में फंस कर रह गया और कमरे में बस्ती राम के साथ सभी छत के नीचे दब गए। जगदीश टंडन ने गुसलख़ाने के अंदर से अपने बेटे सुभाष को मदद के लिए पुकारा लेकिन वो ख़ुद ज़ख़्मों से निढाल हो रहा था। जगदीश और सुभाष की चीख़ो-पुकार सुनकर मनकतुल्लाह ख़ान के बेटे समीर और जहांगीर उनकी मदद के लिए आए। उनके साथ जगदीश लाल के बचपन के दोस्त फ़क़ीर मुहम्मद के बेटे ज़हीर इक़बाल और गुड्डू भी शामिल हो गए। इन चारों ने जगदीश को बड़ी मुश्किल से गुसलख़ाने के रौशनदान से खींच कर बाहर निकाला। वो ज़ख़्मों से बुरी तरह निढाल था और उसकी टांगों और बाज़ू की हड्डियां भी टूटी हुई थीं। उन्हें एक खुली जगह रखा गया और बाद में उनको उठाकर छह किलोमीटर के फ़ासले पर लवासी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सुल्तान के बंगले में ले गए जहां वो चार दिन तक रहे लेकिन वहां भी कोई तिब्बी इमदाद मयस्सर नहीं थी। हिंदुस्तानी हाई कमिश्नर श्री शिव शंकर मैनन की बरवक़्त कोशिश से इन दोनों बाप बेटे को हैलिकॉप्टर से इस्लामाबाद लाया गया जहां पर वो नौ-दस दिन शिफ़ा इंटरनेशनल अस्पताल में भर्ती रहे। हिंदुस्तानी हाई कमिश्नर श्री मैनन और उनके डिप्टी श्री राघवन उनकी मिज़ाजपुर्सी के लिए अस्पताल भी उनसे मिलने गए थे।

इस्लामाबाद में सेहतयाब होने के बाद उनको लाहौर लाया गया जहां से वाहगा बॉर्डर के रास्ते से उन्हें अमृतसर मुंतकिल किया गया। अमृतसर में उनको मज़ीद तिब्बी जांच के लिए दो दिन के लिए रखा गया था जहां से वो **24** अक्तूबर को घर लौट सके। घर पर उनकी वापसी का स्वागत तो हुआ लेकिन बस्तीराम की जुदाई का सदमा भी निहायंत ही शिद्दत के साथ महसूस किया गया।

सत्तर बरस के बस्तीराम के जाने के बाद जब उसके घर वालों ने मुज़फ़्फ़राबाद और उसके मुल्हिका इलाकों में ज़लज़ला आने की ख़बर सुनी, तो उसी दिन से वो उसकी ख़ैरो-आफ़ियत जानने के लिए परेशान थे। ये परेशानी वैसे तो सारे टंडन ख़ानदान को थी लेकिन उनकी बीवी रीता रानी और लड़के विनोद की परेशानी और ग़म का कोई ठिकाना ही न था। वो उसकी ख़ैरो-सलाह के लिए हर वक़्त दुआगो थे। लेकिन उनका हौसला दस अक्तूबर को पाश-पाश हो गया जब यू. एस. ए. से बस्तीराम टंडन के भतीजे ने ये बुरी ख़बर दी कि उस हौलनाक ज़लज़ले में बस्तीराम टंडन की मौत हो गई है और उनका भाई जगदीश लाल बुरी तरह से ज़ख़्मी हुआ है। दो दिन के इंतज़ार के बाद जब उनको ये दिलआज़ार ख़बर मिली तो उनको एक दम उस सदमे का धक्का लगा जो उनकी कुव्वते-बर्दाश्त से बाहर था। वो ऐसा सोच ही नहीं सकते थे कि ऐसी आफ़त उन पर नाज़िल होगी। सात और आठ अक्तूबर की दरम्यानी रात को बस्तीराम ने एस. टी. डी. बूथ से अपने घर वालों को अपनी ख़ैरो-आफ़ियत की इत्तेला दी थी और उसके चार दिन बाद ही ये निहायत अफ़सोसनाक ख़बर सुनने के लिए उनको मजबूर होना पड़ रहा था। ये चार दिन उस ख़ानदान के सभी अफ़राद ने दिलआज़र्दगी, अफ़सुर्दगी और अफ़रातफ़री में गुज़ारे। उन्हें

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कोई मुसद्दिका इत्तेला इन तीनों की ख़ैरो-आफ़ियत की नहीं मिल रही थी। इस दौरान मैं भी दो-एक दफ़ा बख़्शी नगर वस्तीराम टंडन के वेटे विनोद टंडन और बीवी रीता रानी से मिलने गया था ताकि उनकी कुछ हौसला अफ़ज़ाई कर सकूं लेकिन उनके सर पर तो ग़म का पहाड़ टूटा हुआ था। फिर भी मेरी ग़मख़्वारी से उन्हें कुछ तो राहत मिलती थी। इस दौरान कमल टंडन जो जगदीश टंडन का दूसरा वेटा है, उसने टेलीफ़ोन करके हटियां दोपट्टा से मालूम किया कि उसके वालिद जगदीश लाल और भाई सुभाष टंडन ज़िंदा हैं और उनको वांडी दोपट्टा में रखा हुआ है लेकिन उनके चाचा वस्तीराम मल्वे के नीचे दवे हुए हैं और उनको अभी तक मल्वे से निकाला नहीं जा सका है। वहरहाल इस हड़वड़ी के आलम में वस्तीराम के घर वालों को उसकी आख़री रुसूमात ग़ायबाना में अदा करनी पड़ीं। कुछ दिनों वाद वस्तीराम की मस्ख़शुदा लाश को वमय वाक़ी लाशों के मल्वे से निकाला गया। उसके भतीजे तारिक़ और दूसरे भतीजे मुहम्मद फ़ारूक़ की वीवी और मुहम्मद मक़वूल के सात-साला वेटे को दफ़्नाया गया, वहीं वस्तीराम की मस्ख़शुदा लाश को दरियाए-झेलम में जल समाधि दी गई।

जगदीश लाल और वस्तीराम श्री हरिचंद टंडन के वेटे हैं लेकिन मेरी सौतेली वहन सीता देवी जो विधवा थीं उन्होंने वचपन में ही वस्तीराम को गोद ले लिया था और उन्होंने उसकी परवरिश बड़े लाड़-प्यार से की थी। वस्तीराम और उसके दूसरे भाई सभी उनको प्यार से माऊ जी कह कर पुकारते थे। वो भी सबको प्यार करती थीं लेकिन वस्तीराम के साथ उनका रिश्ता निहायत ही नज़दीक का था। मुझे याद है जव सीता वहन विस्तरे-मर्ग पर थीं और मैं उनके सरहाने वैठ कर उनके मुंह में गंगाजल चम्मच से बूंद-बूंद कर के डाल रहा था। अस्पताल में डॉक्टरों ने उनके बचने की उम्मीद छोड़ दी थी और आख़री वक़्त में उनको घर भेज दिया गया था। वो अपनी आख़री सांसें ले रही थीं और उनकी निगाहें दरवाज़े पर थीं। मुझसे मरी हुई ज़वान में वार-वार दरियाफ़्त कर रही थीं कि वावू नहीं आया। पहले तो मुझे समझ में नहीं आया लेकिन मेरी वीवी ने वताया कि ये वचपन में वस्तीराम को वावू के नाम से पुकारती थीं। इतनी देर में वस्तीराम दरवाज़े पर आ कर अभी खड़ा ही हुआ था कि सीता वहन ने आख़री सांस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ली। हमारे घर में सभी वस्तीराम को सीता वहन की निशानी समझ कर निहायत ही प्यार और दुलार से पेश आते थे। टंडन ख़ानदान के साथ हमारा ख़ानदान भी वस्तीराम की नागहानी मौत में उनके रंजो-ग़म में वरावर के शरीक हैं।

उधर उन पांच सरदार भाइयों अवतार सिंह, गुरचरण सिंह, जमैत सिंह, सनमुख सिंह और 88-साला कृपाल सिंह पर कुछ वाहेगुरु की कृपा रही। वो भी वाक़ी मुसाफ़िरों की तरह अपनी जन्मभूमि पिंडी सेरी 16 अक्तूवर शाम को ही पहुंच गए थे। ये गांव हटियां दोपट्टा के नज़दीक ही वाक़े है। वो सव अपनी ज़ादवूम की ज़ियारत करके निहायत ही ख़ुश थे। नीज़ ख़ुशी-ख़ुशी अपने उन रिश्तेदारों से मिले जिन्होंने वहां रह कर इस्लाम कुवूल कर लिया था। उनके वहुत से पड़ोसी और अहवाव भी उनसे 58 साल वाद मिल कर निहायत ही ख़ुश हुए और उन्होंने उनका पुरख़ुलूस इस्तक़वाल किया। ये सव अवतार सिंह के सौतेले भाई शेख़ मुहम्मद इक़वाल के घर में क़यामपिज़ीर हुए। सुवह आठ वजकर 52 मिनट पर ज़लज़ला आया तो ये नाश्ता करने के वाद मुहम्मद इक़वाल के ख़ानदान के साथ सहन में वैठ कर भूली-विसरी वातें याद कर रहे थे कि ज़लज़ले के झटके शिद्दत से महसूस हुए। इन सरदार भाइयों और शेख़ मुहम्मद इक़वाल के ख़ानदान पर ख़ुदावंदे-करीम की ख़ास इनायत हुई कि सभी सही-सलामत घर से वाहर निकल आए। उस घर में काफ़ी दरारें आ गई थीं लेकिन ढेर होने से वच गया था जवकि उनके देखते-देखते वहुत से दूसरे मकान आन की आन में गिर कर मल्वे का ढेर वन गए थे जिन में वहुत जानें ज़ाया हो गई थीं जिनको हाथों से ज़िंदा निकालने की कोशिश की गई लेकिन ये सव वेसूद ही रहा। उनके मुताविक़ हटियां दोपट्टा में कोई दो सौ के क़रीव मकान थे जो सभी मल्वे का ढेर वन गए थे और इस तवाही और वर्वादी में उनका वच जाना एक करामत ही हो सकती थी जवकि तमाम गांव गर्दआलूद चादर में लिपटा हुआ दिखाई देता था और तमाम दवे हुए लोगों की मदद के लिए आवाज़ें आ रही थीं। इस अलमनाक और ख़ौफ़नाक हादसे के वावजूद गांव वालों ने उनकी हर तरह से मदद की ताकि वो ख़ैरो-आफ़ियत से अपने घर लौट सकें। उन्होंने अपने घर वालों को भी अपनी ख़ैरो-आफ़ियत की इत्तेला दी और इंडियन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हाई कमिश्नर के तआवुन से पाकिस्तानी हैलिकॉप्टर से इस्लामाबाद लाए गए जहां से वो सड़क के रास्ते से वाहगा पहुंचे। वहां उनके रिश्तेदार उनको लेने आए हुए थे और उनके साथ वो घर लौट गए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

2

तीन माहे-रमज़ान की ख़ूनी फ़ज्र

माहे-रमज़ान ख़ैरो-वरकत का महीना है। इस माह मुसलमान भाई रोज़ा रख कर अल्लाह तआला के हुज़ूर दुआगो रहते हैं। पांच वक़्त की नमाज़ अदा करने के साथ तिलावते-कुराने-पाक में मशग़ूल रहते हैं। सुवहो-शाम बड़े एहतेराम के साथ तरावीह का एहतेमाम करते हैं। दौराने-तरावीह ख़ुदा की इवादत और इताअत में इस क़दर मह्व हो जाते हैं कि अपनी सुध-बुध खो देते हैं ख़ुदावंदे-पाक के नूर का जलवा करते हैं।

लेकिन माह अक्तूबर 2005 माहे-रमज़ान अपने वंदों के लिए ख़ुदावंदे-करीम की तरफ़ से अपने पहलू में कड़ी आज़माइश ले कर शुरू हुआ। 3 माहे-रमज़ान यानी 8 अक्तूबर 2005 फ़ज्र के आठ बज कर 52 मिनट पर एक ऐसा भयानक ज़लज़ला आया जिसने सिर्फ़ चंद मिनटों मेंही वो तवाही वर्पा कर दी जिसकी कोई मिसाल नहीं। इस अजीव सी वेकैफ़ी और अफ़रातफ़री के आलम में जम्मू-कश्मीर की सरहद के आरपार एक कयामत टूट पड़ी। जिस पर जो वीती उसकी कहानी दूसरों की कहानी से ज़्यादा हौलनाक और क़यामतख़ेज़ थी। मुज़फ़्फ़रावाद के मुख़्तलिफ़ लोगों की मुख़्तलिफ़ अश्क-अफ़शां कहानियां हैं। जव 1989 में मैं मुज़फ़्फ़रावाद अपनी वीवी सावित्री के साथ गया था तव हमने देखा था कि जलालावाद से आगे थोड़ी दूरी र ही सड़क के दोनों जानिव वहुत सी दुकानें, होटल और रेस्टोरेंट वने हुए थे। वहीं से पुराने शहर की तरफ़ पक्की सड़क जाती थी और थोड़ा ही आगे चल कर रेडियो स्टेशन की नई इमारत वनी हुई थी। उससे आगे पहले जहां मक्की के खेत होते थे वहां भी पक्की और आलीशान वस्तियां ही वस्तियां उभर आई थीं। उनके साथ ही एक वहुत वड़ा सिविल और मिलिट्री अस्पताल तामीर हुआ था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अस्पताल के साथ जहां पहले लड़कों का हाई स्कूल होता था जिसको मैंने 1948 में अज़सरे-नौ तामीर करवाया था, अब वहां लड़कियों के हाई स्कूल और साथ ही साथ लड़कियों के कॉलेज की आलीशान इमारत बनी हुई थी। वहां से आगे जहां पहले सरकारी बाग़ और लोगों की निजी ज़मीन हुआ करती थी और जो इलाक़ा बिल्कुल वीरान हुआ करता था अब वहां गुंजान आबादी हो गई थी। उसी इलाके में आज़ाद कश्मीर की यूनिवर्सिटी का कॉम्प्लेक्स भी वाके था।

मेरे ज़हन में मुज़फ़्फ़राबाद की एक ख़ुशहाल, सब्ज़ाज़ार और पुररौनक तस्वीर थी। लेकिन अब उस उजड़े दयार की हालत वैसी नहीं है जैसी कभी हुआ करती थी। अब ये सुनसान और ख़ाली-ख़ाली दिखाई देता है। जैसा कि मुझे मिलने वालों ने बताया ये बस्ती अब बहुत उदास है। इसकी गलियां और सड़कें सुनसान और वीरान हैं। ज़लज़ले से पहले का मुज़फ़्फ़राबाद अब एक ख़ूबसूरत सपना ही रह गया है। अब ये नेस्तो-नाबूद हो गया है। इस के घर ख़ाली और ख़स्ता-हालत हैं। ज़्यादातर तो मल्बे के ढेर में तब्दील हो गए हैं।

मुज़फ़्फ़राबाद के मुख़्तलिफ़ लोगों की अपनी अलग ही दर्द भरी कहानियां हैं। सिर्फ़ कुछ पल में एक ख़ौफ़नाक आवाज़ के साथ मुज़फ़्फ़राबाद की पूरी कायनात उलट-पुलट हो गई। ज़लज़ले की शिद्दत रिक्टर स्केल 7.6 बताई जाती थी। उसके बाद इस शहर के तीन रंग उभरे, आहो-फ़ुगां, गर्दआलूद फ़िज़ा और नफ़सा-नफ़सी का समां। कौन मरा कौन जिया किसी को याद नहीं। ये बस्ती ख़ून में लतपत हो गई। ये शहर अब बस्ती नहीं रहा है, पुरख़ार शारए-आम बन गया है जहां हसरतों ने और वीरानों ने बसेरा कर लिया है। सब कुछ लुट-पिट गया है।

शहर के बस स्टैंड के साथ ही बेला नूर शाह है जो कभी वीरान इलाक़ा था। अब वहां आलीशान इमारतें बनी हुई थीं। यहीं मेरे शागिर्द शेख़ अब्दुल कय्यूम रिटायर्ड डायरेक्टर जनरल, सय्याहत की भी पुरकशिश इमारत वाके थी जिसके सहन में ख़ूबसूरत फूलों से आरास्ता लॉन था। यहां उस आफ़त की घड़ी में ख़ातूने-ख़ाना तिलावते-कुराने-पाक के बाद टीवी लाउंज में ऊंघ रही थीं और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उनकी बड़ी बेटी आमना जो बचपन में ही अपनी बीनाई खो चुकी है अभी तक कलामे-पाक की तिलावत में महव थी, और उसी कलामे-पाक की बरकत और फ़ज़ीलत से सभी अहले-ख़ाना बाहर निकल सके जबकि इमारत ख़स्ता-हाल हो गई। कुछ ही दूरी पर चेला गांव में मेरे अज़ीज़ प्रोफ़ेसर शफ़ीकुर्रहमान साहब कश्मीरी की ज़ौजा मकान के नीचे दब कर फ़ौत हो गई। वो ख़ुद और उनकी मंझली बेटी अस्मा शदीद तौर से ज़ख़्मी हो गए।

चेला गांव तो शहर मुज़फ़्फ़राबाद का ही हिस्सा बन गया है। इससे आगे नीलम वैली शुरू हो जाती है। चेला गांव को पुराने शहर से मिलाने के लिए पुराने किले से थोड़ी दूर पर दरियाए-नीलम (किशन गंगा) पर निहायत ही कुशादा पक्का आर.सी.सी. पुल तामीर किया गया है। ये सड़क आगे चल कर बस स्टैंड से आने वाली सड़क से चेला के मुकाम पर मिल जाती है। इस सड़क पर आगे चल कर मुज़फ़्फ़राबाद से सत्रह किलोमीटर के फ़ासले पर पटाका नाम का एक ख़ूबसूरत और दिलकश कस्बा है। यहां चार सौ एकड़ रकबे में फैला हुआ जंगली जानवरों का पार्क है जो नीलम वैली की सैर के लिए आने वाले सय्याहों के लिए बाइसे-कशिश मुकाम था। इससे आगे मुज़फ़्फ़राबाद से 74 किलोमीटर के फ़ासले पर कुंडल शाही का दिलकश सय्याहती मरकज़ है। इस इलाके को जागरण वादी कहते हैं। कुंडल शाही से दस किलोमीटर के फ़ासले पर अठकमाम का कस्बा है। ये नीलम वैली का सब-डिवीज़नल हेड क्वार्टर है। इससे आगे नौ किलोमीटर के फ़ासले पर नीलम का कस्बा है जिसके बिल्कुल सामने कीरन का इलाका है जो कि हिंदुस्तान के कब्ज़े में है। नीलम से आगे 45 किलोमीटर के फ़ासले पर शारदा का तीर्थ स्थान है। ये हिंदुओं का मुकद्दस मुकाम है और यहां बौद्ध मत के भी पुराने ज़माने के आसार पाए जाते हैं। यहां पर शारदी और तारदी आमने-सामने दो पहाड़ी चोटियां हैं। ये शारदा और नारदा देवी के नाम से मंसूब हैं। यहां पर दरियाए-नीलम से सरगन नाला मिलता है। सरगन नाले के साथ-साथ एक रास्ता नूरी नार दर्रा पार कर के काग़ान वादी को जाता है। शारदा देवी के तीर्थ स्थान के साथ मेरी एक पुरानी भूल जुड़ी हुई है। मैं जब 1989 में मुज़फ़्फ़राबाद गया था, उस वक़्त मेरा शागिर्द

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अब्दुल क्य्यूम वहां की हुकूमत का डायरेक्टर जनरल टूरिज़्म था और मुहम्मद उस्मान चीफ़ कन्ज़र्वेटर फ़ॉरेस्ट था। तब उन दोनों ने मुझे वहां कुछ ख़ास काबिले-दीद जगहें दिखाने की पेशकश की थी। ख़ास तौर पर उन्होंने कहा था कि मुज़फ़्फ़राबाद से 138 किलोमीटर के फ़ासले पर शारदी क़स्बे में हिंदुओं का निहायत ही मुतबर्रक शारदा देवी का निहायत ही क़दीम तीर्थ स्थान है जिस की ज़ियारत कश्मीरी पंडित और दीगर लोग पुराने ज़माने से करते रहे थे, वहां की ज़ियारत के लिए चला जाए और उसके रास्ते में बहुत से सय्याहती मुक़ाम भी देख सकेंगे। ये सारा सफ़र हम जीप पर एक-डेढ़ दिन में तय कर सकेंगे। उस वक़्त तो मैंने जल्दी में इंकार कर दिया था लेकिन बाद में वापस आ कर मुझे मालूम हुआ कि ये तीर्थ स्थान एक निहायत ही क़दीम सिकाफ़ती और तारीख़ी हैसियत रखता है। उस तीर्थ स्थान का तज़करा शारदा महतमाया में किया गया है। उस स्थान की ज़ियारत के लिए प्राचीन ज़माने में राजा-महाराजा और बड़े-बड़े महात्मा आम लोगों के साथ जाया करते थे जिस में नौ-दस दिन सिर्फ़ जाने में लग जाते थे। ये सारा सफ़र मुख़्तलिफ़ रास्तों से पैदल चल कर मुकम्मल होता था जिसके लिए मुख़्तलिफ़ रास्ते थे। ये सभी यात्री बहुत बड़े जत्थों की शक्ल में ये यात्रा मुकम्मल करते थे। जगद्‌गुरु शंकराचार्य जैसे महात्मा और महाराजा गुलाब सिंह जैसे महाराजा ने भी ये यात्रा देवी शारदा की ज़ियारत करने के लिए की थी। ग़ालिबन देवी शारदा का ये मंदिर मशहूर राजा नरसिम्हा के दौरे-हुकूमत में बारहवीं सदी में तामीर किया गया था। इस मंदिर में माता वैष्णो देवी की तर ही तीन कुदरती पिंडियों की स्थापना की गई थी। इतनी कठिन और अहम यात्रा करने के लिए मुझे सिर्फ़ एक-डेढ़ दिन के लिए ही जीप में जाना और वापस आना था जिस को अपनी नासमझी की वजह से मैंने इंकार कर दिया था। ये मेरी बहुत बड़ी भूल थी। अब तो नीलम वैली की सड़क जिस पर ये सफ़र करना था 8 अक्तूबर 2005 के ज़लज़ले में मिस्मार हो कर रह गई है।

8 अक्तूबर के 7.6 स्कल के ज़बरदस्त ज़लज़ल से जहां भारी जानी व माली नुक़सान हुआ वहीं नीलम वादी की सड़क का बेशतर हिस्सा तहस-नहस

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हो गया जिसकी वजह से उस इलाके में कोई इमदादी सामान को पहुंचाना तो दरकिनार शदीद तौर पर ज़ख़्मियों को बरवक़्त तिब्बी इमदाद भी मयस्सर नहीं हो रही थी। निसार अहमद जो अपनी ज़ख़्मी भतीजी को अपने कंधे पर उठा कर पैदल मुज़फ़्फ़राबाद की जानिब जा रहा था, उसका कहना था कि उस इलाके में लाशें जगह-जगह पड़ी हुई हैं और ज़ख़्मियों को तिब्बी इमदाद मिलनी तो दरकिनार उनको पीने का पानी तक मयस्सर नहीं हो रहा था। कुछ लोग मुज़फ़्फ़राबाद जा कर इमदार हासिल करने की ख़्वाहिश रखते हुए भी ये मुसाफ़त तय करने के काबिल नहीं थे।

फ़ौज सड़क को खोलने की कोशिश तो कर रही थी लेकिन ये काम इतना आसान नहीं था जिसको जल्दी मुकम्मल किया जा सके। वो बुल्डोज़र की मदद से मुतबादिल सड़क बनाने के लिए कोशां थे लेकिन इसकी तकमील के लिए कई माह या साल भी लग सकते थे। इसलिए अवाम बरवक़्त इमदाद न मिलने की वजह से काफ़ी हद तक नालां थे। फ़ौज और सिविल हुक्काम हैलीकॉप्टरों और ख़च्चरों के ज़रिए इमदादी सामान मुहय्या कर तो रहे थे लेकिन ये उस वसीअ तबाह आबादी के लिए ऊंट के मुंह में ज़ीरे के बराबर थी। कुछ लोग जो ज़लज़ले की वजह से मुज़फ़्फ़राबाद में रुक गए थे वो अपने अयाल की खोज-ख़बर करने के लिए मायूस, परेशान और मायूस हो रहे थे कि उनके कुंबे पर क्या गुज़री होगी।

मुहम्मद अल्ताफ़ जो मुज़फ़्फ़राबाद इमदाद के लिए जा रहा था, उसका कहना था कि उसने अपने कई रिश्तेदारों को दफ़्नाया और कई अभी भी लापता हैं लेकिन असल मसला ख़ुराका की ज़रूरत का है। अवाम के ग़मो-गुस्से की वजह ज़्यादातार इसलिए थी कि हुकूमत का अमला इस मुसीबत और दुख की घड़ी में कोई ख़ातिरख़्वाह बरवक़्त इमदाद मुहय्या नहीं करा रहा था। अब्दुल हमीद साहब जो ज़िले के नुमाइंदे हैं वो चार दिन और रात की मुसाफ़त तय करके मुज़फ़्फ़राबाद नीलम वादी से लौट कर आए थे, उनके मुताबिक जानी नुकसान जो होना था उसके लिए तो कुछ भी नहीं किया जा सकता था लेकिन जो ज़िंदा हैं और ख़ासकर जो ज़ख़्मी हालत में हैं उनकी सर्दियों में गुज़र-बसर का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

एहतेमाम करना अशद ज़रूरी है। जनाव हमीद साहव को ख़दशा था कि अगर वरवक़्त ज़रूरी इक़दाम नहीं उठाए गए तो उन लोगों का सर्दी के मौसम में ज़िंदा रहना मुश्किल हो जाएगा क्योंकि हवाई ज़रिए से या ख़च्चरों की वारवरदारी से ये ज़रूरत पूरी करनी मुमकिन नहीं हो सकती थी।

मुज़फ़्फ़रावाद का पुराना शहर जो एक पहाड़ी पर वाक़े है जिसको आज से क़रीव **345** साल क़व्ल इसके हुकमरान सुलतान मुज़फ़्फ़र ख़ां वंवा ने वसाया था और उसके नाम पर ही इसका नाम मुज़फ़्फ़रावाद चला आ रहा है। इस शहर में कई नई और पुरानी इमारतें थीं जो उस तवाहकुन ज़लज़ले से ताश के पत्तों की तरह ढह गई थीं। तक़रीवन सत्तर फ़ीसदी इमारतें मल्वे के ढेर में तव्दील हो गई थीं जिनमें यहां का सिविल सेक्रेटेरिएट, सैंट्रल जेल, सिविल और मिलिट्री अस्पताल, मुक़ामी वैंक, होटल, कॉलेज और कई स्कूलों के अलावा आज़ाद जम्मू-कश्मीर यूनिवर्सिटी कॉम्प्लेक्स, पुराने शहर का ऊपर वाला हिस्सा जिसको ख़्वाजा मुहल्ला कहा जाता था विल्कुल मिस्मार हो कर मल्वे का ढेर वन गया था। उस पर तुर्रा ये कि ख़्वाजा मुहल्ले के पीछे जो रंजाटा की पहाड़ी थी इस ज़लज़ले की वजह से वो भी टुकड़े-टुकड़े हो कर शहर के ऊपरी हिस्से पर ही आ गई थी और इस तरह इस हिस्से की निहायत ही हौलनाक और डरावनी तस्वीर वन गई थी जिसका तसव्वुर भी नहीं किया जा सकता था।

इस ज़लज़ले की घड़घड़ाहट से जहां शहर में तवाही व वर्वादी रूनुमा हुई वहां जम्मू कश्मीर यूनिवर्सिटी की भी वुनियादें हिल कर रह गई। इसका ख़ास कॉम्प्लेक्स तो विल्कुल ही मिस्मार हो कर रह गया और नए कैंपस की इमारतें जो नई वनी हुई थीं और कुछ वन रही थीं पूरे या जुज़्वी तौर पर मिस्मार हो गई थीं और अव रिहाइश के क़ाविल नहीं रही थीं। ऑफ़ीशियल रिपोर्ट के मुताविक़ कोई दो सौ तालिवे-इल्म और ग्यारह उस्ताद इस आफ़त में फ़ौत हो गए थे।

आज़म अली अलवी जो मुल्तान का रहने वाला है और होस्टल में रहने वाले तालिवे-इल्म है, अपनी जान वचा कर किसी तरह **10** अक्तूवर को अपने घर मुल्तान पहुंच सका और उस ने वहां से ग्यारह अक्तूवर को पाकिस्तान के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रोज़ाना अख़बार 'नेशन' को जो इंटरव्यू दिया उसका ख़ुलासा कुछ इस तरह है। **8** अक्तूबर को जब **8** बज कर **52** मिनट पर ख़ौफ़नाक ज़लज़ला आया उस वक़्त वे अपने दोस्त बाबर सिद्दीक़ के साथ क्लास में जाने के लिए तैयार हो रहा था। जब इन्होंने ज़लज़ले की शिद्दत महसूस की तो ये दोनों घबराहट के आलम में गिरते-पड़ते कमरे से बाहर निकल गए। बाहर निकल उसने देखा कि तमाम इमारतें ज़लज़ले की शिद्दत से धड़ाधड़ गिर रही हैं। उनके मस्कन, क्या बूढ़े क्या जवान, बच्चे और औरतें शिद्दत से चिल्ला रहे थे और उनके आगे-आगे भाग रहे थे और इस ज़लज़ले की शिद्दत से सामने की एक पहाड़ी टुकड़े-टुकड़े हो कर गिर जाने से हवा का एक गर्दआलूद गुब्बारा सा बन गया था जो उनके आगे बड़ी तेज़ी से चल रहा था। अलवी के मुताबिक़ ज़लज़ले के दो झटके महसूस हुए। पहला झटका निहायत ही ज़रबकारी, आफ़तख़ेज़ और हौलनाक था जिसकी थरथराहट से बहुत सी इमारतें धड़ाधड़ ढह गई और उसके एक-दो लम्हे बाद उसी तरह का दूसरा झटका आया जिससे रही-सही इमारतें भी ढेर हो गई।

अलवी ने सिसकते हुए और रोनी सूरत से अख़बार के नुमाइंदे को बताया कि सभी शोबाजात और होस्टल की दोमंज़िला इमारत बिल्कुल मिस्मार हो चुकी थीं और उनमें फंसे हुए लड़के-लड़कियां और उस्ताद मदद के लिए चीख़ो-पुकार मचा रहे थे लेकिन भारी-भरकम मल्बे से उनको निकाल पाना मुमकिन नहीं था। उसने आह भर कर बयान किया कि कंप्यूटर लैब में आग लगने की वजह से तक़रीबन पचास लड़कियां ज़िंदा जल गईं। अलवी को ख़दशा है कि इस आफ़त में लगभग आठ सौ क़ीमती जानें तल्बा और असातेज़ा की तल्फ़ हुई होंगी। यूनिवर्सिटी कैंपस के मुताल्लिक़ उसका कहना था कि उसकी अज़सरे-नौ तामीर में कई साल लगेंगे।

उस वक़्त हो रही सैलाबी बारिश ने ज़लज़ले की ज़द में आए हुए आफ़तज़दा लोगों की मुश्किलात में इज़ाफ़ा कर दिया। मुज़फ़्फ़राबाद की तमाम सड़कें इस बारिश की वजह से बंद हो चुकी थीं इसलिए ये सभी आफ़तज़दा लोग चीख़ते-चिल्लाते उनके साथ गढ़ी हबीबुल्लाह की तरफ़ रवाना हो रहे थे और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पैदल चल कर ही वहां पहुंच सके जिसमें चार-पांच घंटे लगे। रास्ते में सभी गांव इस ज़लज़ले की वजह से तवाहो-वर्वाद हुए दिखाई दे रहे थे।

इस ज़मीनी हैवतनाक आफ़त की दहशत से मुज़फ़्फ़रावाद शहर का मलियामेट हो गया जिसके मुताल्लिक प्लानिंग महकमे के अफ़सरों का कहना है कि मुज़फ़्फ़रावाद को अज़सरे-नौ तामीर करना अगले चालीस साल में भी मुमकिन नहीं हो सकेगा। उनका ये भी कहना है कि इस दारुस्सल्तनत को पुराने शहर से हटा कर किसी दूसरी जगह तामीर करना ज़्यादा सूदमंद सावित होगा क्योंकि शहर की तंग गलियों से मल्वा हटाना मुश्किल काम ही नहीं वल्कि कुछ हद तक नामुमकिन है। एक जायज़े के मुताविक़ मुज़फ़्फ़रावाद में अमवात की तादाद पचास हज़ार से ज़्यादा हो सकती है और वेघर और वेसहारा होने वालों की तादाद लाखों में हो सकती है।

ज़लज़ला-ए-कश्मीर जिसको पाकिस्तानी ज़लज़ला या जुनूवी एशिया का ज़लज़ला भी कहा जाता है जिसका महवर पाकिस्तान के क़ब्ज़े वाले कश्मीर में मुज़फ़्फ़रावाद के नज़दीक वताया जाता है जो 8 अक्तूवर को पाकिस्तानी वक़्त के मुताविक़ 08:50:38 और स्टैंडर्ड टाइम के मुताविक़ UTC (03:50:38) के मुताविक़ आया था, उसकी शिद्दत रिक्टर स्केल पर 7.6 मापी गई। ये तमाम दुनिया में आए ज़लज़लों से ज़्यादा हैवतनाक और तवाहकुन था। पाकिस्तान के सरकारी अंदाज़े के मुताविक़ कुल अमवात 73276 अफ़राद हो सकती हैं। और इसी तरह हिंदुस्तानी ज़ेरे-क़ब्ज़ा कश्मीर में कुल चौदह सौ अमवात वाके हुई। पाकिस्तान में ही शदीद तौर पर ज़ख़्मियों की तादाद 29260 वताई गई और वेघर हुए लागों की तादाद ढाई विलियन होने का अंदाज़ा है। ये तवाही व वर्वादी ज़्यादातर पाकिस्तानी क़ब्ज़े वाले इलाक़ाजात मुज़फ़्फ़रावाद, वाग़ और रावलकोट में हुई। इसके अलावा पाकिस्तान में वालाकोट, शंकियारी, वाटाग्राम, मांसरा, ऐवटावाद, मरी और इस्लामावाद के कुछ हिस्से में तवाही हुई।

अव पहले का मुज़फ़्फ़रावाद एक ख़याल ही वन कर रह गया है। इसकी तस्वीर जिसका मुशाहिदा मैंने 1989 में अपनी वीवी के साथ किया था अव फ़क़त एक ख़याल वन गया है। अव ये उजड़ा दयारे-वतन है। इसकी वो तस्वीर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जो कभी हुआ करती थी अब सिर्फ़ तसव्वुर में ही देखी जा सकती है। बहुत से मंसूबे और प्लान इस उजड़े दयार को फिर से बसाने के बनाए जा रहे हैं लेकिन सभी अभी तक कागज़ों से बाहर नहीं पा रहे हैं। अमली तौर पर अभी तक कुछ भी नहीं हो रहा है। साहिबे-इख़्तियार साकितो-जामिद हैं, अख़बार जमाख़र्चियों और तस्वीरों से पुर हैं, नक़्शे बन रहे हैं, मास्टर प्लान पर ग़ौर हो रहा है लेकिन सरकारी दफ़ातिर और शहर की बची-खुची आबादी को किसी दूसरी जगह पर मुंतकिल करने का मसला तअत्तुल का शिकार है।

ज़लज़ले से पहले का मुज़फ़्फ़राबाद एक सपना हो कर रह गया है जो अब नेस्तो-नाबूद हो गया है। साहिबे-दौलत मजबूर हो कर हिजरत कर के इस्लामाबाद या किसी और जगह जा बसे हैं, बेयारो-मददगार किसी तरह गुज़र-बसर कर रहे हैं। सैकड़ों बच्चियां और बच्चे ज़िंदगी की बाज़ी हार चुके हैं। कोई उनके सिर पर शफ़कत का हाथ रखने वाला नहीं है। नौजवान पौध के दिल में आलमे-शबाब की रौशनी फ़रोज़ां थी लेकिन उनको इसकी जलवागरी का मौका ही नहीं मिला और ये पैवंदे-ख़ाक हो गई।

अब आज़ाद जम्मू कश्मीर की हुकूमत, जिसकी सरबराही सरदार अतीकुर्रहमान अहमद ख़ान साहब कर रहे हैं, इस मंसूबे पर अमलपैरा है कि दारुस्सल्तनत को मुज़फ़्फ़राबाद के बजाय पलंदरी या कोटली मुंतकिल कर दिया जाए। ऐसा ज़लज़ला आने की रिपोर्ट के मद्देनज़र किया जा रहा है। इस फ़ैसले की मुख़ालिफ़त में मुज़फ़्फ़राबाद की आबादी और दीगर सियासी लोग कता ताल्लुक किसी पार्टी के मुख़ालिफ़त कर रहे हैं। और इस फ़ैसले के मुताल्लिक मुज़फ़्फ़राबाद के अवाम का एक राय से ये कहना है कि हुकूमत जानबूझ कर ज़लज़ले से मुताल्लिक रिपोर्ट की आड़ में ये कदम उठा रही है जिसके लिए कोई जवाज़ नहीं है। उनका मज़ीद कहना है कि सिवाय शहर के थोड़े से हिस्से के बाकी शहर का इलाक़ा ज़लज़ले की ज़द से बाहर है। इस फ़ैसले के ख़िलाफ़ ज़लज़ले से आबादकारी व देखभाल करने वाले इदारे ने भी ये बात तस्लीम की है कि दफ़ातिर को किसी दूसरी जगह मुंतकिल करने की कोई ज़रूरत नहीं है।

अब दिलचस्प बात ये है कि इन उजड़े इंसानों से कोई हमदर्दी और दिलचस्पी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

न रखने वाले इस दलील का सहारा ले रहे हैं कि जनरल साहब की अमन बहाल करने की कोशिश के नतीजे में रियासत के अलाहदा तीन ज़ोन बन सकते हैं। गो मीरपुर कोटली और पुंछ इज़ला जम्मू सूबे का हिस्सा हैं लेकिन इन इज़ला की तहज़ीबो-सिक़ाफ़त बहुत हद तक पंजाब और सूबा-ए-सरहद से मिलती है इसलिए इनका एक ज़ोन बना कर इन तीन इज़ला को बमय शिमाली इलाक़ाजात के पाकिस्तान की सीधी अमलदारी में रखा जाए। इस तरह जम्मू सूबे के इज़ला और लद्दाख़ हिंदुस्तान की अमलदारी में होंगे। कश्मीर वैली और मुज़फ़्फ़राबाद जिनकी तहज़ीब और सिक़ाफ़त बहुत हद तक एक जैसी है उनका एक तीसरा ज़ोन बनाया जाएगा जो इन दोनों मुमलिकतों के कंट्रोल में किसी तयशुदा मंसूबे के तहत रखा जाएगा। इसलिए आज़ाद कश्मीर का दारुस्सल्तनत कोटली या पलंदरी होना ही मौज़ूं रहेगा। ये किस हद तक क़ाबिले-अमल होगा इसके मुताल्लिक कुछ कहा नहीं जा सकता। इस ज़िमन में पंजाबी की एक ज़र्बुल्मसल है "धी पेट कनक खेत आ जुवाया मंडे खा" यानी बेटी अभी बतन में है गंदुम अभी खेत में है और दामाद को शादी की दावत पर मदऊ किया जा रहा है। ये अमन की कोशिशें कब रंग लाएंगी, और साहिबे-इख़्तियार इस उजड़े दयार को किस हद तक वीरान कर देंगे इसका अंदाज़ा लगाना मुश्किल है।

अब तो इस उजड़े दयार के मस्कन चचा ग़ालिब के इन मिस्रों को याद कर के दिन काट रहे हैं कि

कौन जीता है तेरी ज़ुल्फ़ के सर होने तक
शम्मा हर रंग में जलती है सहर होने तक

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

3

मेरी बेक़रारी अपनों से मिलने की, दुख की घड़ी में

जब अक्तूबर 2005 को ज़लज़ला आया उस वक़्त मैं जम्मू अपने घर में अकेला ही था। मेरी बीवी सावित्री दिल्ली में अपनी बेटी के पास थी। एक लड़का गिरधारी लाल जो मेरे साथ रहता है उस वक़्त स्कूल गया था। मैं अपने कमरे में पलंग पर लेट कर कुछ पढ़ रहा था जब मुझे झटके महसूस हुए। पहले मुझे समझ नहीं आ रहा था कि क्या हो रहा है पर जल्द ही मुझे अंदाज़ा हो गया कि ये ज़लज़ला है। मैं मकान से बाहर निकल गया और मकान से थोड़ी दूरी पर सहन में बैठ गया। इतने में ज़लज़ला भी थम गया। मैं अंदर आ गया। थोड़ी देर में गिरधारी भी स्कूल से वापस आ गया। उसका कहना था कि बहुत ज़बरदस्त ज़लज़ला आया था। स्कूल के सभी लड़के और उस्ताद चीख़ते-चिल्लाते हुए स्कूल से बाहर निकल कर ग्राउंड में आ गए थे। उनके स्कूल की उस्तानियां सबसे ज़्यादा घबराई हुई थीं और घर जाने के लिए बेताब हो रही थीं ताकि अपने अहले-ख़ाना की ख़ैरो-आफ़ियत जान सकें। इसलिए स्कूल में छुट्टी कर दी गई है। जम्मू शहर और इसके गिर्दो-नवाह में इस ज़लज़ले से कोई जानी या माली नुक़सान नहीं हुआ। फ़क़त लोगों में घबराहट और अफ़रातफ़री का आलम कुछ अर्से तक रहा। फिर सब कुछ हस्बे-दस्तूर हो गया।

लेकिन जल्द ही इस ज़लज़ले से भयानक तबाही की ख़बरें मौसूल होना शुरू हो गईं। इस ज़लज़ले का महवर सरहद की क़ब्ज़ा लाइन के नज़दीक ही मुज़फ़्फ़राबाद की जानिब वाक़े था जहां सबसे ज़्यादा तबाही और बर्बादी हुई और शहर बिल्कुल मल्बे का ढेर बन कर वीरान हो गया। नीज़ इस वजह से सरहद के इस पार सबसे ज़्यादा तबाही और बर्बादी ज़िला कुपवाड़ा में टंगधारट कीरन और करनाह के इलाक़े में हुई और ज़िला बारामूला में उड़ी का इलाक़ा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सबसे ज़्यादा मुतास्सिर हुआ। मेरा जद्दी गांव कमलकोट भी उड़ी तहसील में वाके है। इस गांव में मैंने अपना बचपन और जवानी का कुछ हिस्सा गुज़ारा है। मैंने शुरू की तालीम भी कमलकोट के प्राइमरी स्कूल में हासिल की है जो कि अब हाई स्कूल बन गया है। हमारा आबाई घर तो कस्बा मुज़फ़्फ़राबाद में था लेकिन हमारी ज़मीन और कारोबार इसी गांव में था जहां हम दुकानदारी भी करते थे और इसके साथ घी, मक्की और अख़रोट वग़ैरा यहां की पैदावार की ख़रीद और फ़रोख़्त भी करते थे।

इसके अलावा इस गांव से कुछ तल्ख़ यादें भी जुड़ी हुई हैं। ये अक्तूबर माह **1947** का दौर था जब रियासत पर **22** अक्तूबर को कबायली हमला हुआ था। उस वक़्त मैं और मेरे ख़ानदान के कुछ दीगर अफ़राद जिन में ज़्यादा औरतें और बच्चे थे यहां तक़रीबन अठारह माह मौत और ज़िंदगी के साए में गुज़ारने को मजबूर थे। इस दौरान हमें हर रोज़ ही ये अंदेशा रहता था कि सुबह सो कर उठे हैं तो पता नहीं कि शाम तक ज़िंदा होंगे कि नहीं, और अगर शाम को ज़िंदा हैं तो अगली सुबह भी देखनी नसीब होगी कि नहीं। ये कैफ़ियत उस दिन से शुरू हो गई थी जिस दिन कबायली हमला हुआ था। इस दौरान हम जो ज़िंदगी वहां गुज़ार रहे थे वो बहुत सुस्त और बेमकसद होने के अलावा ग़ैरयक़ीनी सी थी और हर वक़्त ये डर लगा रहता था कि न जाने कब और किस बहाने ज़िंदगी का सिलसिला मुन्कता हो जाएगा। उस वक़्त बाहर के हालात की कोई भी मुसदेक़ा जानकारी हमें हासिल नहीं थी। फ़क़त सुनी-सुनाई अफ़वाहें एक आदमी से दूसरे तक सफ़र कर रही थीं अगरचे गांव वाले हमारी हर तरह से हिफ़ाज़त करते थे और हमेशा ढारस बंधाते रहते थे कि उनके होते हुए हमें कोई ख़तरा नहीं है लेकिन आबरूरेज़ी और लूटमार के जो हक़ीक़ी मंज़र देखने और सुनने में आ रहे थे उनसे भी आंखें मूंदी नहीं जा सकती थीं। हमें ये जानकारी तो हो गई थी कि रियासत का हिंदुस्तान के साथ इल्हाक़ हो गया है और हिंदुस्तानी फ़ौजें श्रीनगर आना शुरू हो गई हैं और अब तेज़ी से बढ़ती हुई उड़ी तक आ गई हैं। लेकिन उड़ी से आगे बढ़ने में काफ़ी दुश्वारियां आ रही थीं। हिंदुस्तानी फ़ौज की इस पेशक़दमी से जो कबायली महाज़ से भागते

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

थे वो वापसी पर रास्ते में ख़ूब लूटमार बरपा करते थे। इसी दौरान हमें मालूम हुआ कि हमारे गांव से कुछ फ़ासले पर कठाई नाम का एक छोटा सा कस्बा था जो चिनारी के पड़ाव के बिल्कुल सामने था वहां हिंदुओं को कुल्हाड़ियों से ज़िबह कर दिया गया है। उसके दो-तीन बाद हमें भी मौत के घाट उतारने के लिए चकोठी ले गए थे जो उस वक़्त पाकिस्तानी फ़ौज का उड़ी वाले महाज़ का हेड क्वार्टर था। लेकिन हमारे गांव के जो लोग हमारे हमराह आए थे हमें मौत के चंगुल से छुड़ा कर वापस गांव ले गए।

इस ज़िंदगी और मौत की आंखमिचोली और घटाटोप अंधेरे में उम्मीदों के चिराग़ भी मौजूद थे। राक्षसों की नगरी में इंसान भी मौजूद थे जहां नफ़रत, तशद्दुद और दहशत की हुकमरानी थी वहीं मुहब्बत, एतेमाद और बेख़ौफ़ी की लहर भी देखने को मिली। उस वक़्त सचमुच ये मौत की वादी थी जहां इंसान इंसान को काट रहा था, गोलियां चल रही थीं और लूट का बाज़ार गर्म था। तब वहां कोई निज़ाम नहीं था। जंगल का क़ानून राइज था लेकिन वहां हमारे गांव वाले थे जो हमें अपनों की तरह प्यार करते थे, जहां मौत हर वक़्त सामने मुंह फाड़े दिखाई देती थी लेकिन हिफ़ाज़त करने वाले बाजुओं का घेरा बहुत मज़बूत था। शफ़क़त के हाथ और मुहब्बत भरी नज़रें हमेशा साथ थीं। यहां मेरा दिलावर चचा था जिसने अपने बेटे की कुर्बानी दे कर मेरी जान बचाई थी। यहां सभी हमारे अपने दिखाई दे रहे थे।

लेकिन अप्रैल 1948 को हमें ये गांव आख़री बार छोड़ना पड़ा क्योंकि हमें मालूम हुआ कि मुज़फ़्फ़राबाद से बचे-खुचे हिंदुओं को रेड क्रॉस की वसातत से हिंदुस्तान भेजा गया है। हम अब बग़ैर किसी हील-हुज्जत के पाकिस्तानी फ़ौजियों के हुक्म से मुज़फ़्फ़राबाद रवाना हो गए। हमारे गांव वालों ने हमें चिकोठी तक पहुंच पाने में पूरी मदद की और हमें बमय अपने सामान के फ़ौजी ट्रक में मुज़फ़्फ़राबाद ले जाने के लिए सवार कराया था। उस वक़्त हमारे गांव में तक़रीबन सभी कच्चे मिट्टी के बने हुए मकान थे अलावा चंद एक के जो लोहे की जी. आई शीट की छत वाले थे जिन में साईं शरबत हुसैन और राजा कमरुद्दीन ख़ां के मकान काबिले-ज़िक्र हैं। हमारे मुज़फ़्फ़राबाद जाने के कोई दो माह बाद ही हिंदुस्तानी फ़ौज उड़ी से लाल पुल जिसको अब अमन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सेतु कहते हैं और दरियाए-झेलम के दूसरे किनारे की जानिब से पांडू पहाड़ी तक क़ाविज़ हो गई। इस तरह से कमलकोट का गांव हिंदुस्तानी अमलदारी में आ गया था। हमारे गांव वालों ने हमारी जानो और इज़्ज़त-आवरू की इस नफ़रत, तशद्दुद और दहशत के दौर में मुहब्बत, एतेमाद और वेख़ौफ़ी से हिफ़ाज़त की जब ये इलाक़ा राक्षसों की हुकमरानी में था जिसको हम ताहयात भूल नहीं सकेंगे।

मुझे माह जुलाई या अगस्त 2005 में मेरे दामाद रमेश चंद्र जी जो खादी एंड विलेज इंडस्ट्री वोर्ड के सेक्रेट्री हैं ने बताया कि अब कमलकोट तक पक्की सड़क बनी हुई है और दरियाए-झेलम पर इस्लामावाद के मुक़ाम पर एक पक्का पुल तामीर किया हुआ है जिससे इस्लामावाद से जो उड़ी से दस-बारह किलोमीटर के फ़ासले पर है और वहां से गाड़ियां दरियाए-झेलम को पार कर के सीधी कमलकोट तक जाती हैं। वो ख़ुद भी उस इलाके का दौरा कर के आए थे। इस तरह मैं अपने जद्दी गांव की ज़ियारत करने जा सकता हूं। मेरी सेहत उस वक़्त अच्छी नहीं थी, इसलिए मुझे सब ने ये सफ़र करने से मना किया था चुनांचे मैंने अपने दामाद की वसातत से अपने गांव वालों को एक खुली चिट्ठी लिख कर भेजी। साथ में मैंने अपनी तहरीर कर्दा कितावें वी वहां के हाई स्कूल की लाइब्रेरी के लिए इरसाल कीं। मैं ख़ुद तो जाने के क़ाविल नहीं था, इसलिए मैंने अपनी नेक ख़्वाहिशात चिट्ठी में तहरीर कर के इरसाल कर दीं।

इस खुली चिट्ठी के जवाब में वहां के हाई स्कूल के हेड मास्टर जनाब मुसद्दिक हुसैन मन्हास की शुक्रिये की चिट्ठी जो कि उन्होंने 15-09-05 को तहरीर की थी, मिली। उसमें उन्होंने कितावों का शुक्रिया अदा करते हुए लिखा था कि मेरी चिट्ठी में उन्होंने अपने दादा जी साईं शरवत हुसैन साहब का नाम पढ़ा तो उन्हें अज़हद मुसर्रत हुई। मज़ीद उन्होंने तहरीर किया कि जिन वुजुर्गों का नाम मैंने तहरीर किया था वो सभी सिवाय मीर अली शेख़ सरपंच हल्का कमलकोट के फ़ौत हो चुके हैं। मुझे आने की पुरख़ुलूस दावत देते हुए उन्होंने तहरीर किया कि वो उन वुजुर्गों की औलादों से मेरा तआरुफ़ करवा देंगे। ये ख़त मुझे ज़लज़ला आने के दस पंद्रह दिन पहले ही मौसूल हुआ था। चिट्ठी की नक़ल नीचे दी हुई है:-

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मोहतरम जलीलुलकद्र जनाव चरण जीत लाल सहगल साहव
आदावो-सलाम।

मैं हाजी मुसद्दिक हुसैन मन्हास हेड मास्टर हाई स्कूल कमलकोट उड़ी आप का वेहद मशकूर हूं कि आपने चार अदद किताबें जो कि जनावे-वाला ने तहरीर की हैं लाइब्रेरी के लिए रवाना फ़रमाई। आप की इस इलाके के लिए मुहव्वत और प्यार वता रहा है कि यहां अवाम से मुलाकात करें। जिन बुज़ुर्गों का आपने ज़िक्र किया इन सवकी औलादें यहां मौजूद हैं। एक मीर अली शेख़ साहव सरपंच हल्का कमलकोट ज़िंदा हैं वाकी तमाम फ़ौत हो चुके हैं।

मैं हाजी मुसद्दिक हुसैन मन्हास वलद साई मुज़फ़्फ़र हुसैन नंवरदार शाहदरा जव्ड़ा वलद साई शरवत हुसैन साकिना कमलकोट हूं, अर्ज़ यूं है कि जव आप के ख़त में मैंने अपने दादा जी का नाम देखा तो मैं वहुत ही ख़ुश हुआ। इस वक़्त मेरे ताया जी साई नूर हुसैन और साई इनायत हुसैन नंवरदार कमलकोट ज़िंदा हैं, ताया साई वाग़ हुसैन फ़ौत हो चुके हैं लेकिन उनके लड़के मास्टर रशीर हुसैन रिटायर हो चुके हैं। आप जव भी इरादा कमलकोट का करें तो आप मेरे पते पर तशरीफ़ लावें, मैं आप को ज़ियारत शरीफ़ शाहदरा और वावा काज़ी नाग और तमाम उन बुज़ुर्गों की औलाद से तआरुफ़ करा दूंगा। यहां पर हालात विल्कुल अच्छे हैं। मैं कोशिश करूंगा आप से माह दिसंवर 2005 में जम्मू में मुलाकात करने की। मैंने जम्मू में एक मकान छोटा सा तामीर कराया है। इंशाल्लाह आप से ज़रूर मुलाकात करेंगे। अगर कभी हो सके तो मोवाइल पर आप वात कर सकते हैं। नंवर ये है-9419052076। आख़िर में तमाम अयाल को और तमाम पढ़ने-सुनने वालों को कमलकोट की धरती का सलाम अर्ज़ हो। वस्सलामुअलैकुम वरहमतुल्लाहि ववरकातुहू।

आप का मुख़लिस
हाजी मुसद्दिक हुसैन
हेड मास्टर हाई स्कूल
कमलकोट

ज़लज़ला आने के दो-तीन दिन वाद मैं दिल्ली इलाज करवाने के लिए चला गया लेकिन ख़वरों में अपने गांव कमलकोट और शहर मुज़फ़्फ़रावाद की हौलनाक तवाही

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और बर्वादी का हाल लगातार सुन रहा था। इस दौरान मैं अस्पताल में भर्ती हुआ था। वहां से मैंने हाजी मुसद्दिक हुसैन मन्हास हेड मास्टर हाई स्कूल कमलकोट को फ़ोन कर के उनकी ख़ैरो-आफ़ियत दरियाफ़्त की। उनका कहना था कि वो ख़ुद तो ठीक हैं लेकिन वो अपने ही ख़ानदान में तकरीबन उन्नीस लाशें दफ़्ना चुके हैं। गांव के सभी मकान मिस्मार हो गए हैं। हाई स्कूल की इमारत भी बिल्कुल दब गई है जिससे स्कूल का रिकॉर्ड और तमाम किताबें मिट्टी में दबी हुई हैं जिससे स्कूल का रिकॉर्ड और तमाम किताबें मिट्टी में दबी हुई हैं। उन्होंने मज़ीद बताया कि दरयाए-झेलम पर बना हुआ पुल भी जुज़वी तौर पर मिस्मार हो गया है। इसलिए उनका बाहर की दुनिया से राब्ता मुन्कता हो गया हुआ है। सिर्फ़ हवाई ज़रिए से मदद मयस्सर हो रही है। ऐसी हालत में मैं उनके लिए अल्लाह के हुज़ूर में दुआ के सिवाय कुछ करने से कासिर था।

मुज़फ़्फ़राबाद से जो ख़बरें मौसूल हुई थीं उनसे मालूम हुआ कि मेरे अज़ीज़ प्रो शफ़ीकुर्रहमान की बीवी इस ज़लज़ले में फ़ौत हो गई हैं। दीगर ये कि वो ख़ुद भी और उनकी दरम्यानी लड़की अस्मा शदीद तौर से ज़ख़्मी हैं और इस्लामाबाद के अस्पताल में ज़ेरे-इलाज हैं। मैंने इस्लामाबाद अपने हमजमाअती मलिक मुज़फ़्फ़र को फ़ोन कर के सब के मुताल्लिक दरियाफ़्त किया। उनका कहना था कि मेरी जान-पहचान वाले और मेरे सब अज़ीज़ ख़ैरो-आफ़ियत से हैं जिन में शेख़ कय्यूम अब इस्लामाबाद में उनके नज़दीक रह रहे हैं। इस तरह से कुछ दीगर लोगों के मुताल्लिक उन्होंने बताया कि वो 'भी इस्लामाबाद उजड़ कर आ गए हैं। मज़ीद कुछ के मुताल्लिक उनको जानकारी नहीं थी। इसलिए मैंने राजा मुहम्मद असफ़र जो 'डॉन' अख़बार के रिपोर्ट र हैं को ई-मेल से एक मुकम्मल फ़हरिस्त अपने अज़ीज़ों की इरसाल कर के उन से इस्तिदआ की थी कि उनकी ख़ैरो-आफ़ियत की जानकारी मुझे दें। वो अपने काम में मसरूफ़ियत की वजह से मुझे उनके ई-मेल का जवाब नहीं दे सके। लिहाज़ा मैंने टेलीफ़ोन से ही उनसे सीधा राब्ता कायम करते हुए सब के मुताल्लिक जानकारी हासिल की। वो भी सब को नहीं जानते थे। फिर भी उन्होंने बताया कि मेरे शागिर्द मुहम्मद उस्मान अमेरिका चले गए हैं। इसके अलावा ख़ालिद मुज़फ़्फ़र, अब्दुर्रशीद, मुहम्मद मतीन और मतीन जो मेरे शागिर्द हैं उनकी ख़ैरियत की ख़बर दी।

उस दिन मुझे अस्पताल से तो छुट्टी मिल गई लेकिन मैं अपनी लड़की नीलम और उसके ख़ाविन्द त्रिलोचन जो कि दोनों ख़ुद भी बहुत काबिल डॉक्टर हैं, की देखरेख

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant.

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

में उनके घर पर ही ज़ेरे-इलाज रहा। दवाइयां और टैस्ट वग़ैरा जारी रहे। कुछ दिनों वाद मुझे मेरे एक काविल शागिर्द शेख़ विशारत अहमद का फ़ोन मौसूल हुआ। मैंने उन से सबके मुताल्लिक दरियाफ़्त किया। उनका कहना था कि मेरे अज़ीज़ों में वहुत से तो उजड़ कर इस्लामावाद आ गए हैं और कुछ मुज़फ़्फ़रावाद में ही ख़ेमावस्तियों में रह रहे हैं।

कुछ दिनों वाद डॉक्टर क्लेर ने मेरी वात जनाव विलाल लोन साहव से करवाई। मैंने उनसे भी अपने अज़ीज़ों के मुताल्लिक दरियाफ़्त किया अगर वो उनको जानते हों क्योंकि वो अक्सर मुज़फ़्फ़रावाद और इस्लामावाद जाते रहते थे और उस वक़्त भी वो हुर्रियत कांफ़्रेंस के एक वफ़द के साथ इस्लामावाद जा रहे थे। वो मेरे अज़ीज़ों में सिर्फ़ प्रो. शफ़ीकुर्रहमान कश्मीरी को अच्छी तरह जानते थे और उन्होंने मुझे ये भी बताया कि प्रोफ़ेसर साहब अभी भी इस्लामावाद के किसी अस्पताल में ज़ेरे-इलाज हैं। लोन साहव ने मज़ीद कहा कि वो उन से वहां मिलेंगे और अगर मुझे उनके लिए चिट्ठी या दीगर कुछ भेजना हो तो वो ले जाएंगे। वो अपनी गाड़ी भेज कर चिट्ठी और सामान ले जाने के लिए मंगवा लेंगे। चुनांचे मैंने चिट्ठी और कुछ कपड़े ख़रीद कर भेजने के लिए तैयार रखे थे लेकिन लोन साहव शायद अपनी सियासी मसरूफ़ियात की वजह से मेरा सामान लेना भूल गए। मुझे ठेस तो लगी लेकिन कुछ कर नहीं सकता था क्योंकि मेरी अलालत की वजह से मुझे कोई वहां जाने नहीं दे रहा थ। और लोन साहब से मेरी ज़ाती वाकफ़ियत न के बराबर थी।

इस हालत में अपने अज़ीज़ों के पास इस दुख की घड़ी में जाने की और उनके लिए कुछ भी कर सकने की ख़्वाहिश़ फ़कत मजबूरी में दब कर रह गई। मैं इस आरज़ू में दिन गुज़ारता रहा कि कब मुझे मौक़ा मिलेगा कि मैं अपने इन अज़ीज़ों से मिल सकूंगा और अपने नेक जज़्वात का इज़हार कर सकूंगा। मैंने टेलीफ़ोन से राब्ता क़ायम रखा लेकिन जाने के लिए मजबूर ही रहा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

4

अचानक तैयारी

मैं माह जून 2006 में फिर दिल्ली आया था। तव डॉ. क्लेर मेरे वड़े दामाद को लाहौर किसी कांफ्रेंस में शमूलियत करने के लिए जाना था। मैंने भी उनके साथ जाने की ख़्वाहिश ज़ाहिर की पर उनका कहना था कि वो सिर्फ़ लाहौर तक ही जा रहे हैं और दो-तीन दिन के वाद वापस आ जाएंगे और ये कि वो मुझे लाहौर से इस्लामावाद भेज तो सकेंगे लेकिन वापसी पर अपने साथ नहीं ला सकेंगे। उनका ये भी कहना था कि इस वक़्त शदीद गर्मी का मौसम है और मेरी सेहत भी ठीक नहीं है इसलिए वो दोवार जव जाएंगे तो मुझे ज़रूर ही ले जाएंगे। उनकी मजवूरी के मद्देनज़र मैंने उनका फ़ैसला मान लिया। इस तरह से डॉ. क्लेर और उनके साथ रवि वावा चले गए। वापसी पर मुझे रवि वावा ने बताया कि इस सफ़र में लाहौर पहुंच कर डॉक्टर साहव तो अपनी कांफ्रेंस में चले जाते थे और रवि वावा गर्मी की वजह से होटल में दिन भर अख़वारात का मुतालिआ करते रहते थे। मुझे भी यही महसूस हुआ कि जान की ज़िद न करके मैंने अच्छा ही किया।

मैं माह अगस्त में वापस जम्मू आ गया था और यहां तीन माह क़याम करने के वाद 30 नववंर को वापस दिल्ली चला गया था। दिल्ली जाने के एक-दो दिन बाद डॉ. क्लेर ने मुझसे कहा कि वो 17 दिसंबर को लाहौर और इस्लामावाद मुझे अपने साथ ले कर जाएंगे और ये उनकी तरफ़ से मेरे लिए एक तोहफ़ा होगा। मुझे डॉ. क्लेर की इस अचानक पेशकश से निहायत मुसर्रत हुई। उन्होंने कहा कि अगर हो सकेगा तो वो मुझे मुज़फ़्फ़रावाद भी ले जाने की कोशिश करेंगे। इस तरह से डॉ. क्लेर ने मेरी दुखती रग पर हाथ रख दिया। मैं मुज़फ़्फ़रावाद तो हर हालत में जाने की कभी ख़्वाहिश रखता था लेकिन इसके साथ मुझे एक डर सा लग रहा था कि इस वक़्त मुज़फ़्फ़रावाद को देख कर मेरे दिल पर क्या गुज़रेगी। अव वहां मैं किसी की कोई मदद तो कर नहीं

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सकता था लेकिन अपने दयारे-वतन की हालते-ज़ार देख कर दुखी ही होऊंगा। लेकिन फिर भी जाने की ख़्वाहिश ज़्यादा वज़नदार थी। इससे पहले जब मैं 1989 में अपनी बीवी के साथ वहां गया था, तब का एक दिलकश और हसीन मंज़र मेरे दिमाग़ में अभी तक ताज़ा है जिसे मैं किसी भी हालत में मस्ख़ नहीं होने देना गवारा कर सकता हूं। तब हम मुज़फ़्फ़र साहब के बड़े बेटे अतहर के साथ गए थे और मुज़फ़्फ़र की बहन यानी क़य्यूम लाला की बीवी सकीना बहन भी हमारे हमराह थी।

हम मरी के रास्ते गए थे क्योंकि ये रास्ता सब से छोटा रास्ता है और इस रास्ते के दिलफ़रेब मंज़र और फ़ितरत की उश्वातराज़ियां देखने से ताल्लुक़ रखती हैं, उनको बयान करना नामुमकिन है। ये रास्ता इस्लामाबाद से मुज़फ़्फ़राबाद तक एक सौ आठ किलोमीटर है लेकिन कोहाला जहां से रियासत जम्मू कश्मीर की हद शुरू होती है वहां तक पहुंचने में हमें काफ़ी वक़्त लगा था।

इस्लामाबाद से चल कर सब से पहले हम छरापानी के पड़ाव पर रुके थे। यहां पहाड़ी से ठंडे पानी का बहुत बड़ा सोता फूट रहा था। आगे घोड़ागली आती है जहां पर अंग्रेज़ अपने दौरे-हुकूमत में रावलपिंडी से बग्घी में मरी के लिए सवार होकर यहां अपने घोड़े तब्दील करते थे। इसीलिए इसका नाम घोड़ागली है। इसी तरह छोटे-छोटे पड़ावों जैसे बंसारा गली, सानीबंग वग़ैरा गुज़रने के बाद लपंडी पॉइंट आता है जहां से रावलपिंडी और इस्लामाबाद साफ़ दिखाई देते हैं। इसके आगे मरी और गलियां हैं जो माहौलियाती एतबार से फ़ितरती माहौल की भरपूर नुमाइंदगी करती है। सदर अय्यूब ख़ां ने अपने दौरे-हुकूमत में जहां इस्लामाबाद की बुनियाद रखी थी वहीं इन चार छोटे-छोटे सय्याहती मुक़ामों को मिला कर अय्यूबिया नाम का सय्याहती मरकज़ वजूद में लाए थे। इसके इतराफ़ में फैले हुए चेल और देवदार के दरख़्त माहौल को मुअत्तर बनाते हैं। ये एक जदीद शहर है जहां हर तरह की सहूलियात मयस्सर हैं।

आगे कोहाला के मुक़ाम पर ही वो पुराना पुल था जिस पर महाराजा हरि सिंह के हुक्म से पंडित नेहरू को रियासत में दाख़िल होने से रोका गया था। इसके बाद कोई ख़ास तब्दीली नहीं देखी गई। लेकिन इसके आगे अंबोर और छतर के गांव आते हैं; उनकी काया कल्प हो गई थी। वहां से शहर की आबादी और दफ़ातिर की इमारत का सिलसिला शुरू हो गया था और पुराने शहर तक दरियाए-झेलम और नीलम के दोनों किनारों पर नई बस्तियां बनी हुई थीं। ये इमारात और नई कॉलोनियां पुराने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

शहर से ज़्यादा पुरकशिश दिखाई दे रही थीं जिनमें बहुत से रेस्ट हाउस और होटल बने हुए थे। किशन गंगा यानी नीलम के पुल के पार बेला नूर शाह जो बिल्कुल वीरान बियाबान होता था वहां भी आलीशान रिहाइशी कोठियां बनी हुई थीं। ये तामीरात का सिलसिला आगे पहुंचगरां तक चला जाता था जहां से थोड़ा आगे चेला का गांव है और वहां पर पुराने शहर से आने वाली सड़क भी इस सड़क से आ कर मिलती है। इस सड़क पर वादी-ए-नीलम का इंतेहाई ख़ूबसूरत सय्याहती इलाक़ा भी है। ये पुरकशिश वादी मुज़फ़्फ़राबाद के शिमाल मशरिक़ में दरियाए-नीलम के साथ-साथ दोनों जानिब वादी-ए-कश्मीर और वादी-ए-काग़ान के सीने में वाके दो सौ किलोमीटर तक फैली हुई है। इसको दो सिलसिला-ए-कोह जो **765** ता **4575** मीटर बुलंद हैं एक दूसरे से जुदा करते हैं। इसके सदाबहार जंगलात और जड़ी-बूटियां होने के अलावा वादी में हर सू सब्ज़ा ही सब्ज़ा है। हक़ीक़त में यहां फ़ितरत अपने पूरे जमाल और बांकपन के साथ जलवा अफ़रोज़ थी जिसका आग़ाज़ मुज़फ़्फ़राबाद से ही हो जाता है। ये तो था **1989** का नक़्शा जो मेरे ज़हन में ताज़ा-बताज़ा चला आ रहा है। अब ये नक़्शा किस तरह का होगा इसका मैं तसव्वुर करने से ही घबराता हूं। बहरहाल ये हक़ीक़त है जिससे आंखें मूंदी नहीं जा सकतीं।

कुछ दिनों के बाद डॉ क्लेर ने मेरा और रवि बाबा का पास्पोर्ट ले कर अपने साथ वीज़ा हासिल करने के लिए पाकिस्तान के हाई कमिश्नर से रुजू किया। हम सब को लाहौर, ननकाना साहब, इस्लामाबाद, तक्षशिला और पंजा साहब का टूरिस्ट वीज़ा तो मिल गया लेकिन दिल्ली से लाहौर जाने वाली फ़्लाइट के लिए टिकट नहीं मिल सके, और न ही मुज़फ़्फ़राबाद जाने का वीज़ा मिल सका क्योंकि इस वीज़ा के लिए काफ़ी छानबीन करने की ज़रूरत होती है जिसके लिए काफ़ी वक़्त दरकार होता है। डॉ क्लेर जिन के साथ हम जा रहे थे उनको **17** दिसंबर को लाहौर अपनी कांफ्रेंस में शामिल होने के लिए पहुंचना था। दूसरे ये सर्दी का मौसम था और मरी में बर्फ़बारी हो रही थी जिससे रास्ता बंद हो जाने का भी ख़दशा था। अब इस्लामाबाद और मुज़फ़्फ़राबाद के दरम्यान हवाई राब्ता भी मुअत्तल हो चुका था। मैं भी अपने दयारे-वतन को इस उजड़ी हुई हालत में देखने की परेशानी से घबरा रहा था लेकिन अपनों से मिलने की चाह तो हद से ज़्यादा थी। अगर उनके लिए और कुछ नहीं कर सकता तो कम से कम हमदर्दी और हौसला अफ़ज़ाई से उनकी ढारस तो बंधा सकता

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

था। डॉ. क्लेर ने ये भी विश्वास दिलाया कि इस्लामाबाद जा कर देखेंगे और अगर मुनासिब हुआ तो वहां से मुज़फ़्फ़राबाद जाने का इंतज़ाम करेंगे। बहरहाल इस सब के होते हुए हमारी जाने की तैयारी मुकम्मल हो गई।

डॉ. क्लेर हर महीने एक या दो सनीचर के दिन अमृतसर के एस्कॉर्ट अस्पताल में मरीज़ों का इलाज करते हैं। इसलिए वो 16 दिसंबर को ही अमृतसर पहुंच गए और मुझे रवि बाबा के साथ 17 दिसंबर की सुबह आठ बजे की फ़्लाइट से अमृतसर के लिए रवाना होना था ताकि उसी दिन हम अमृतसर से सुबह-सुबह ही रवाना हो कर लाहौर पहुंच सकें।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

5
रवानगी

हमें दिल्ली से सीधे लाहौर का हवाई टिकट न मिल पाने की वजह से हमारी दिल्ली से रवानगी और आगे के सफ़र का प्रोग्राम इस तरह तय पाया था। डॉ. क्लेर जो मुझे और रवि वावा को अपने साथ ले जा रहे थे उनको 16 दिसंबर को अमृतसर एस्कॉर्ट अस्पताल में मरीज़ों का इलाज और मुआलिजा करना था। इसलिए वो उस दिन सुबह ही अमृतसर पहुंच गए थे। मैं और रवि वावा 17 दिसंबर की सुवह आठ बजे की फ़्लाइट से कोई नौ वजे के लगभग अमृतसर पहुंच गए। आगे हम तीनों को उसी दिन वाहगा के रास्ते से लाहौर रवाना होना था। इसलिए मैं और रवि वावा सीधे हवाई अड्डे से एम. के. होटल रवाना हुए जहां डॉ. क्लेर ठहरे हुए थे। हम नाश्ता करने के बाद वहां से तीन कारों में रवाना हुए। हम तीनों के अलावा एम. के. होटल के मालिक मि. संजय और उनकी वीवी मिसेज़ शैली भी हमारे हमराह जा रहे थे। एक कार में मैं और मिसेज़ शैली के अलावा संजय साहव का एक मुलाज़िम था। दूसरी कार में संजय साहव और डॉ. क्लेर थे। जवकि तीसरी कार में रवि वावा और कुछ सामान के वड़े-वड़े पैकेट थे जो संजय साहव लाहौर अपने साथ ले जा रहे थे। रास्ते में मुझे मिसेज़ शैली ने वताया कि उन के पास सार्क तंज़ीम का वीज़ा है जो दो-तीन साल के लिए जायज़ रहता है। इसलिए वो हर दूसरे-तीसरे महीने लाहौर ख़रीद-फ़रोख़्त करने के लिए जाते रहते हैं। उस दिन उन्हें शाम को ही वापस आना था।

हम सव साढ़े दस वजे के क़रीव वाहगा पोस्ट पर पहुंच गए थे लेकिन वहां दोनों जानिव कस्टम और सिक्योरिटी की जांच-पड़ताल होती है। इसलिए कार्रवाई में एक घंटे से ज़्याद का वक़्त लग गया, वो भी जान-पहचान की वजह से हो पाया था। पाकिस्तान की जानिब हमें लेने के लिए डॉ. डार साहव आए हुए थे और संजय साहव को लेने मग्गू साहव आए हुए थे। मग्गू साहव भारी डील-डौल के पुरवक़ार शख़्सियत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के मालिक आदमी थे। उन्होंने जांच कराने में हमारी मदद की। इसलिए हम जल्दी फ़ारिग हो सके।

मैं, डॉ. क्लेर और रवि बावा डॉ. डार साहब की कार में उन के साथ लाहौर की जानिब रवाना हो गए। हमने जल्दी पहुंचने के लिए शेरशाह सूरी मार्ग या जी. टी. रोड का रास्ता इख़्तियार किया था लेकिन इस रास्ते पर जगह-जगह मरम्मत का काम सड़क को कुशादा करने के लिए चल रहा था, इसलिए हमें रास्ते में जगह-जगह दिक़्क़त का सामना करना पड़ा जिसकी वजह से हम काफ़ी देर से लाहौर पहुंच पाए। जबकि मग्गू साहब संजय साहब और मिसेज़ शैली को नहर के रास्ते से ले गए थे और वो हम से पहले पहुंच गए थे। नीज़ उन को चार बजे से पहले वापसी पर वाहगा बॉर्डर पार करना था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

6
लाहौर पहुंच कर

हम कोई दो-ढाई बजे के करीव लाहौर पहुंच गए थे। लाहौर सूवा-ए-पंजाब का दारुस्सल्तनत ही नहीं है वल्कि एक मशहूर तारीख़ी शहर है। ये शहर दरिया-ए-रावी के दो किलोमीटर शिमाल में है। इस का रकवा 404 मुरब्वा किलोमीटर है और ये सतहे-समंदर से 210 मीटर की ऊंचाई पर है। इसकी आवादी लगभग पचास लाख के करीव होगी। इसकी वुलंद और इक़वालमंद इमारात, चमकते-दमकते मीनार, वल्व की मानिंद गोल गुंवद न सिर्फ़ देखने वालों के लिए एक यादगार तस्वीर पेश करते हैं वल्कि इसकी दिलकश छाप उनके दिलो-दिमाग़ पर कुंदा हो जाती है। इसका पाकिस्तान के शहरों में अपना एक ख़ास मुक़ाम है। ये एक सरसब्ज़, ज़रख़ेज़ और वारआवर इलाक़ा माना जाता है।

लाहौर के मुताल्लिक ये मशहूर है कि ये राजा रामचंद्र के वेटे लव ने वसाया था जिनका एक छोटा सा ख़स्ताहाल मंदिर अभी भी लाहौर के किले के आलमगीरी दरवाज़े के नज़दीक माना जाता है। संस्कृत ज़वान में आवर से मुराद है ताकत, लाहौर यानी लव की ताक़त या लव का शहर। तारीख़ी वयान के मुताविक लाहौर आठवीं सदी के लगभग अज़ीम हुकमरान ललिताद्य की वाजगुज़ार रियासत रही है। दरियाए-रावी लाहौर शहर से दो किलोमीटर के फ़ासले पर है। इस दरिया को ऋगवेद में इरावती नाम से वयान किया हुआ है। ये हिंदू देवी दुर्गा माता के नामों में से एक है। इस शहर को 1021 में महमूद ग़ज़नी ने लाहौर के हिंदू राजा से फ़तह किया था। तव ग़ज़नी के दौरे-हुकूमत में हिंदू अहद के आसारे-क़दीमा को तहस-नहस कर दिया गया था। हिंदू अहद के वचे-खुचे आसारे-क़दीमा भी वाद में मुसलमान हमलावरों ने मिस्मार कर दिए। मौजूदा लाहौर की वुनियाद मुगल दौरे-हुकूमत में ख़ास तौर पर अकवरे-आज़म के दौर में जिसने लाहौर को अपना दारुस्सल्तनत वना लिया था मानी जाती है। इसमें

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बाकी मज़ीद इज़ाफ़ा दीगर मुगल हुकमरानों ख़ास तौर पर जहांगीर और शाहजहां के दौरे-हुकूमत में हुआ। सिख दौरे-हुकूमत में भी इसमें मज़ीद बेहतरी लाई गई।

लाहौर में जब हम पुरानी माल रोड या ठंडी सड़क पर आए जिसको अब शाहराह कायदे-आज़म के नाम से पुकारा जाता है। ये अब भी बहुत ख़ूबसूरत और पुररौनक शाहराह है लेकिन उतनी ठंडी नहीं रही जितनी आज से पचास साल पहले थी। अब इसके किनारों के दरख़्त कुछ कम हो गए जान पड़ते हैं और इमारात में भी इज़ाफ़ा हो गया है। इनमें एक निहायत ही ख़ूबसूरत और काफ़ी बड़ी इमारत वापडा की है और माल रोड पर पुराने म्यूज़ियम की बहुत बड़ी इमारत में अब भी म्यूज़ियम ही है जिस के सामने किम की बहुत बड़ी तोप अब भी मौजूद है जिसको ज़मज़मा भी कहते हैं। ये तोप शाह वली ख़ान जो कि अहमद शाह दुर्रानी के वज़ीर थे के लिए बनाई गई थी जिसको पानीपत की लड़ाई में भी इस्तेमाल किया गया था। बाद में ये राजा महाराजा रणजीत के कब्ज़े में उनके इस्तेमाल में होती रही थी। शाहराह कायदे-आज़म पर लॉरेंस गार्डन है जिसको अब बाग़े-जिन्नाह के नाम से मनसूब किया जाता है। इसके बगल में ही पी सी यानी पर्ल कॉन्टिनेंटल पांच सितारा होटल है जहां हमारे कयाम का एहतेमाम किया हुआ था। इस आलीशान होटल की ख़ूबसूरत इमारत के लॉन में हमारी कार जब आ कर रुकी तो उस वक़्त हल्की-हल्की बूंदा-बांदी हमें ख़ुशआमदीद कहने के लिए हो रही थी। डॉक्टर डार साहब जो कार चला रहे थे उन्होंने कार की चाबी बियरर को दी ताकि वो कार को पार्क कर के सामान हमारे कमरों में ले आए। हम डॉक्टर डार साहब के हमराह उस दिलकश और पुरनूर होटल में दाख़िल हुए जहां बहुत बड़ा लाउंज था जिसमें मैं और रवि बाबा दो कुर्सियों पर बैठ कर उस होटल की निफ़ासत और पुररौनक माहौल का नज़ारा करते रहे और डॉक्टर डार और डॉक्टर क्लेर चेक-इन के लवाज़मात पूरे करने में मशग़ूल हो गए। उनसे फ़ारिग होने के बाद हमें एक पुरवकार और शानो-शौकत वाली लिफ़्ट में हमारे कमरों तक ले जाया गया जहां मुझे और रवि बाबा को एक कमरे में रखा गया और डॉक्टर क्लेर के लिए दूसरा कमरा था लेकिन हमारा कमरा ही कॉमन रूम का काम दे रहा था। हम ने कमरे में ही दोपहर का खाना खाया। उसके बाद डॉक्टर डार और डॉक्टर क्लेर कांफ्रेंस के लिए चले गए। मैं और रवि बाबा कमरे में ही लेट गए।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रवि बाबा तो ख़ूब गहरी नींद सो गया लेकिन मुझे डवल डन्लप वाले पलंग पर लेटने से कमर दर्द होने लगा। इसलिए मैं तकिये के सहारे बैठ कर पुरानी यादों में खो गया। सबसे पहले मैं लाहौर 1946 में एम. एससी. कैमिस्ट्री में दाख़िल। लेने के लिए आया था लेकिन देर से आने की वजह से दाख़िला नहीं मिल सका था। मैं वापस मुज़फ़्फ़राबाद जाने के बजाय यहीं रुक कर कुछ काम करना चाहता था ताकि आने वाले सैशन में दाख़िला वक़्त पर आसानी से ले सकूं। उस वक़्त अंग्रेज़ों का राज था और लाहौर पूरे हिंदुस्तान का एक कुलीदी शहर माना जाता था। तब एक कहावत थी कि लाहौर लाहौर ही है और जिसने लाहौर नहीं देखा उसने कुछ नहीं देखा। मुझे यहां रहने के लिए छज्जू के चौवारे में दूसरी मंज़िल पर एक छोटा कमरा बग़ैर किराया अदा किए मिल गया था। ये ख़ूबसूरत चौवारा शाह आलमी दरवाज़े के अंदर दाख़िल होते ही एक छोटी गली के सिरे पर था। उसके नीचे एक बड़ा हॉलनुमा सा कमरा था जिसमें हनुमान जी का मंदिर था और साथ ही भक्तों के बैठ कर पूजा करने के लिए खुली जगह थी। इस हॉल की दीवारों पर मुगल तामीरात की तरह बहुत सी जाज़िबे-नज़र चित्रकारी की हुई थी। ये चौवारा निहायत ही साफ़-सुथरा और नफ़ीस फ़न्ने-तामीर का नादिर नमूना दिखाई देता था। इसीलिए किसी ने कहा होगा कि जो सुख छज्जू के चौवारे में वो न बल्ख़ न बुख़ारे में। ख़ैर जो भी ये कहावत हो मैंने इस छज्जू के चौवारे में चंद माह बड़े आराम और आसाइश से गुज़ारे थे जहां साथ ही हर मंगलवार को जी भर कर हनुमान जी का प्रसाद खाने को मिलता था।

मुझे एक मैडिकल सप्लाई कंपनी में काम भी बड़ी आसानी से मिल गया। उस कंपनी का दफ़्तर निस्बत रोड पर था जहां मैं पैदल ही जा सकता था। मेरे पास उनकी दी हुई दवाइयों की फ़हरिस्त थी और एक ऑर्डर लेने की कापी जिस पर मैं उन्हें दुकानदारों से ऑर्डर लेकर देता था। मेरा काम उस कंपनी के मालिक को बहुत पसंद था और वो हर तरह से मेरी हौसला अफ़ज़ाई करता था लेकिन मैं वहां कुछ ही दिन काम कर सका क्योंकि मुझे डी. ए वी. हाई स्कूल में सीनियर मास्टर की नौकरी मिल गई जो मुझे बहुत पसंद थी। इसलिए मैंने ये नौकरी छोड़ दी और स्कूल की नौकरी करनी शुरू कर दी। पहले तो मैं छज्जू के चौवारे में रहता था लेकिन बाद में मुझे होस्टल का इंचार्ज भी बना दिया गया और मैं स्कूल के होस्टल में ही रहने लगा जहां मुझे हर तरह

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

की सहूलियात मयस्सर थीं। होस्टल में ज़्यादातर लाहौर के मुल्हिका गांवों या आवादियों के लड़के थे। वो मुझे अपने वड़े भाई जैसी इज़्ज़त और प्यार देते थे। यहां भी मैं जून **1947** तक ही रह सका क्योंकि उसके वाद गर्मियों की छुट्टियों के लिए स्कूल वंद हो गया और मैं वापस घर चला गया।

मैं अपना कुछ सामान और सव जमा नक़दी भी जो लक्ष्मी कमर्शियल वैंक में जमा थी वहीं छोड़कर आया था। मुझे उम्मीद थी कि मैं छुट्टियों के वाद वापस आकर स्टडी लीव लेकर एम् एससी में दाख़िला लूंगा। ऐसा भरोसा मुझे स्कूल की इंतज़ामिया ने भी दिलाया था। उस वक़्त पंजाब में जनाव ख़िज़र हयात ख़ान साहव की हुकूमत थी। वो यूनियनिस्ट पार्टी से ताल्लुक रखते थे। तव कोई सोच भी नहीं सकता था कि हिंदुओं और मुसलमानों में इस क़दर नफ़रत पैदा कर दी जाएगी कि वो एक दूसरे की जानों के दुश्मन वन जाएंगे, मुल्क वट जाएगा और लाहौर जो हिंदुओं मुसलमानों सभी की रूह था एक तब्के के लिए परदेस हो जाएगा। एक भाई उसका मालिक वन जाएगा और दूसरे की पहुंच से वहुत दूर हो जाएगा। वहरहाल जो कुछ नहीं होना चाहिए था वो हो कर रहा, और हमें भी कुवूल करना पड़ा। अव तो मैं लाहौर आ ही नहीं सकता था जबकि मेरी पूंजी और ज़रूरी सामान भी वहीं रह गया था और उस पर तुर्रा ये कि मेरा वाकी सामान भी मुज़फ़्फ़रावाद में थ और मैं ख़ुद गर्मी की वजह से मुख़्तसर सा सामान लेकर कमलकोट अपने गांव चला गया था, और वाद में क़वायली हमला होने पर वहीं फंस कर रह गया। वहां मेरी कुल पूंजी पहने हुए दो कपड़े और गास के जूते थे।

मुल्क दो क़ौमों में वट गया लेकिन ये दो क़ौमें हिंदू और मुसलमान नहीं थीं क्योंकि जितनी आवादी पाकिस्तान में मुसलमानों की थी उससे ज़्यादा उनकी आवादी हिंदुस्तान में रह रही थी। इस वटवारे के साथ जहां हिंदुस्तान सदियों की गुलामी के वाद आज़ादी हासिल कर सका जिस पर हमारा फ़ख़र करना और ख़ुशी मनाना एक क़ौमी फ़रीज़ा है, वहीं इस वटवारे से वर्रे-सग़ीर में दो नई मुमलिकतें वजूद में आई जिन के क़याम में आते ही सरहद के आरपार की अकलियतों पर ऐसी क़यामत टूटी जिसकी तारीख़ में कोई मिसाल नहीं मिलती है। इस मारकाट की वहशतअंगेज़ी इस इंतेहा तक पहुंच गई थी जिससे आलमी तारीख़ में इंसानियत की गिरावट का एक नया रिकॉर्ड कायम हुआ जो हमारे लिए शर्मिंदगी, निदामत और मातम का मुक़ाम था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उस वक़्त मैं अपने गांव कमलकोट में था। जब 22 अक्तूबर 1947 को मुज़फ़्फ़राबाद पर कबायली हमला हुआ तब वहां भी नफ़रत, वहशत तशद्दुद और मारकाट की हुकमरानी थी और ग़ैरमुस्लिम मरते-कटते दूर-दूर पनाह ढूंढ़ रहे थे। इस घटाटोप अंधेर में मैंने ज़िंदगी और मौत की आंखमिचोली को निहायत ही करीब से देखा था। लेकिन उसके साथ ही मैंने इंसानी मुहब्बत, ख़ुलूस और एतेमाद की इंतेहा को भी देखा था। जहां अगर्चे मेरा कोई दुश्मन नहीं था लेकिन मौत हर वक़्त मुंह बाए सामने खड़ी दिखाई देती थी, वहीं हिफ़ाज़त करने वाले शफ़क़त से भरपूर हाथों का घेरा भी बहुत ही मज़बूत था जिससे मुझे ऐसा महसूस होता था कि मेरे गांव वालों के होते हुए कोई मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

उसके बाद भी मैं तीन-चार बार निहायत ही कसमपुर्सी की हालत में लाहौर आया हूं। जब मेरी क़ौमियत भी कुछ मश्कूक ही थी तब पहली बार लाहौर माह अगस्त 1948 में आया था। मैं उस वक़्त अंबूर कैंप में रहता था और दिन को मुज़फ़्फ़राबाद हाई स्कूल में पढ़ाने के लिए जाता था। कैंप में रहने वाले सब हिंदुओं की फ़हरिस्त मुरत्तब की गई थी जिनकी तादाद लगभग चौदह सौ रही होगी, और उन सबको हुकूमते-वक़्त की तरफ़ से बाकायदा राशन दिया जाता था। ये मुख़्तलिफ़ गांवों के इकट्ठे हुए लोग थे जिनमें ज़्यादातर औरतें और बच्चे थे। उस वक़्त मुज़फ़्फ़राबाद से बाहर किसी भी जगह जाना निहायत ही मुश्किल काम था। सिर्फ़ मिलिट्री की गाड़ियां रात को चलती थीं। दिन को बमबारी के डर से कोई ट्रैफ़िक सड़क पर नहीं चलती थी। नीज़ उस वक़्त मुझे ख़ुद भी जाने में डर सा लग रहा था। लेकिन इस क़दर बुरे दिन देखे थे कि हर डर बेमायनी हो कर रह गया था। मैंने कुछ मामूली तैयारी कर के जाने का इरादा कर ही लिया। एक मलेशिया की शलवार कमीज़ पहनी हुई थी, पांव में एक पुरानी चप्पल थी जिसका एक पांव एक वज़ा का था और दूसरा उससे मुख़्तलिफ़ था। दो-तीन रुपये में मोची से ख़रीदी पुरानी चप्पल इससे अच्छी क्या हो सकती थी।

मेरे जाने की परेशानी भी कर्नल मुराद साहब ने हल कर दी थी। वो मुज़फ़्फ़राबाद में मिलिट्री पुलिस के कमांडिंग ऑफ़िसर थे। उनका ये नाम और रैंक फ़र्ज़ी था, फिर भी वो मेरे बहुत अच्छे दोस्त थे। उन्होंने शुक्रवार रात को एक फ़ौजी ट्रक में मुझे

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बहैसियत मास्टर बिठा दिया और ट्रक में बैठे हुए फ़ौजियों से कहा कि मुझे रावलपिंडी ले जाएं और अगर हो सके तो वापस भी ले आएं। इस तरह मैं उसी दिन दस बजे के करीब रावलपिंडी पहुंच गया। वहां मुझे अपने करीबी दोस्त कय्यूम लाला के पास जाना था जो हबीब बैंक में काम करता था। जब मैं बैंक जाने के लिए बाज़ार से गुज़र रहा था, तो वहां जगह-जगह कबायली फिर रहे थे और बेमकसद अपनी बंदूकों से हवा में गोलियां चला रहे थे। जब मैं बैंक पहुंचा तो कय्यूम लाला भी मुझे अचानक देख कर हैरान ही नहीं बहुत ज़्यादा परेशान हो गया। उस ने मुझसे बैंक में कोई बात नहीं की और परेशानी की हालत में मुझे सीधा अपने घर ले गया जहां वो अकेला रहता था। वहां बैठ कर उसने मुझसे इत्मीनान से तवील बातचीत की, मुझे खाना खिलाया और कुछ नकदी दे कर लाहौर रवाना किया।

लाहौर पहुंच कर मैं सीधा ट्रेडर्ज़ बैंक गया जहां मेरे एक रिश्तेदार जियालाल टंडन काम करते थे। वो आरज़ी तौर पर आए थे। वहां मुझे अपने कॉलेज का हमजमात मलिक मुज़फ़्फ़र भी मिला। मैं रात को उसके पास ही ठहरा लेकिन गर्मी की शिद्दत से रात भर ठीक तरह से नींद नहीं आई। दूसरे दिन इतवार मैं बिल्कुल सुबह ही हुकूमते-हिंदुस्तान के डिप्टी हाई कमिश्नर सरदार संपूर्ण सिंह जी के पास चला गया। वो मुझे बाहर लॉन में मिल गए। उस वक़्त वो अमृतसर जाने वाले थे। वो मुझसे गर्मजोशी से मिले और उन्होंने मेरी बातें दिलचस्पी से सुनीं। मैंने उनको अपने और अंबूर कैंप के बारे में सब कुछ तफ़सील से बताया। कैंप के सब नफ़ूद की फ़हरिस्त जो मैं अपने साथ लाया था उनको दी और उनसे इल्तेजा की कि हम अंबूर कैंप में रहने वाले हिंदुओं को हिंदुस्तान भेजने में मदद करें। उन्होंने ये सब कुछ हमदर्दी से सुना लेकिन इस सिलसिले में मदद करने में मजबूरी ज़ाहिर की। उनका कहना था कि हुकूमते-हिन्द पाकिस्तानी कश्मीर के वजूद को ही तस्लीम नहीं करती है और न ही उससे कुछ राब्ता कायम कर सकती है। अलबत्ता वो मुझे अपनी कार में बआसानी अमृतसर ले जा सकते थे। मैंने उनकी इस मेहरबानी का शुक्रिया अदा किया और कहा कि मैं उनके पास एक मकसद ले कर आया था और मेरा मकसद अंबूर कैंप में रह रहे सब साथियों को हिंदुस्तान पहुंचाना था। अगर मैं ख़ुद चुपके से चला जाऊंगा तो ये न सिर्फ़ उन सबके साथ बेवफ़ाई होगी बल्कि मेरा मकसद भी फ़ौत हो

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जाएगा जिसकी इजाज़त मेरा ज़मीर हरगिज़ नहीं देगा। उन्होंने मेरे जज़्बात की कदर की। मैं उनसे रुख़्सत होकर सीधा मुज़फ़्फ़रावाद आ गया।

पहली जनवरी 1949 को हिंदुस्तान पाकिस्तान के दरम्यान कश्मीर में जंगवंदी का मुआहिदा अमल में आया था। उस वक़्त मैं कैप्टन मियां नसरुद्दीन जो वहां की हुकूमत के फ़ाइनैंस और रेवेन्यू मिनिस्टर थे, उनकी लड़कियों को घर में पढ़ाता था क्योंकि उस वक़्त मुज़फ़्फ़रावाद में लड़कियों का कोई स्कूल नहीं था। उनका एक लड़का लाहौर मैडिकल कॉलेज में पढ़ता था। वो ईद की छुट्टी पर घर आया तो मुझसे मिला। वो मेरी ही उम्र का था इसलिए मेरी वहुत जल्द उससे दोस्ती हो गई। मैंने उससे कहा कि मैं भी लाहौर जा कर एम. एससी. कैमिस्ट्री की तालीम हासिल करना चाहता था। इस पर उसका कहना था कि पंजाव यूनिवर्सिटी के कैमिस्ट्री के हेड ऑफ़ द डिपार्टमेंट डॉक्टर वशीर अहमद साहव उसके वाकिफ़ हैं और वो लाहौर वापस जा कर उनसे दरियाफ़्त करके मुझे चिट्ठी लिख देगा। लाहौर वापस जा कर उसने मुझे चिट्ठी लिखी कि उसकी डॉक्टर साहव से वात हो गई है और मैं लाहौर आ कर उनसे मिल कर दाख़िला ले सकता हूं।

इस तरह मुझे दूसरी वार लाहौर जाने का मौका मिला। सिर्फ़ ये डर रहता था कि आते-जाते रास्ते में किसी को मेरी असलियत का पता चल गया तो जान का ख़तरा हो सकता है। मैं दौराने-सफ़र वस में बैठ कर हाथ में कोई किताव या रिसाला रख कर नज़रें उस पर झुकाए रखता था। इस वार मैं लाहौर पहुंच कर एक छोटे से होटल में फ़र्ज़ी नाम से ठहरा और दूसरे दिन डॉ. वशीर अहमद साहव से मिला। डॉक्टर साहव मुझसे वहुत प्यार से मिले। उन्होंने मुझे अपने वेटे जैसा प्यार और शफ़कत दी। वदकिस्मती से उस वक़्त दाख़िला नहीं हो रहा था, इसलिए उन्होंने मुझे यकीन दिलाया कि आने वाले सैशन में मुझे ज़रूर एम. एससी. फ़र्स्ट इयर में दाख़िला देंगे। उन्होंने मुझसे यहां तक कहा कि मैं उनको अपने वालिद की तरह ही समझूं और दौराने-तालीम उनके घर में उनके वेटे की तरह रिहाइश रखूं। मैं उनके साथ थोड़ी देर की मुलाकात में इस कदर मुतास्सिर हुआ जैसे वो मेरे निहायत ही करीवी वुज़ुर्ग हों और मैं उन्हें मुद्दत से जानता होऊं। मेरी उस वक़्त की वीरान ज़िंदगी में उनके प्यार और शफ़कत ने मेरे दिल पर आवे-हयात का काम किया और मैं ख़ुशी-ख़ुशी मुज़फ़्फ़रावाद चला गया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मैं एक बार फिर लाहौर 1950 के मार्च में आया और डॉ. वशीर साहब से मिल कर एम. एससी. में दाख़िले के फ़ार्म वग़ैरा मुकम्मल कर के उनको दिए। उन्होंने तसल्ली दी कि मुझे ज़रूर ही दाख़िला मिल जाएगा। उस वक़्त मुज़फ़्फ़राबाद में जम्मू से हिजरत कर के आए हुए मिस्टर अब्दुल हई डिप्टी चीफ़ सेक्रेटरी थे। मैं उनके लड़के बिशारत अहमद को घर पर हिसाब पढ़ाने जाता था। इस वजह से जनाब अब्दुल हई साहब से मेरे बड़े गहरे ताल्लुक़ात बन गए थे। मैंने उनसे भी अपना लाहौर में तालीम हासिल करने का इरादा ज़ाहिर किया जिस पर उन्होंने ख़ुद ही फ़रमाया कि वो मुझे गवर्मेंट की जानिब से दाख़िला दिलाएंगे और इस तरह मुझे स्टडी लीव मिल जाएगी और वहां तालीम के इख़राजात के लिए तनख़ाह का कुछ हिस्सा मिलता रहेगा। माह अगस्त 1950 में मुझे पंजाब यूनिवर्सिटी लाहौर के दफ़्तर से बज़रिये तार इत्तेला मिली कि मुझे वहां एम. एससी. में दाख़िला मिल गया है, और जितनी जल्दी हो सके मैं लाहौर पहुंच कर किसी कॉलेज के ज़रिए अपने दाख़िले के काग़ज़ात मुकम्मल कर के तालीम हासिल करनी शुरू कर दूं लेकिन हुकूमत से इस दाख़िले की मंज़ूरी नवंबर के आख़िर में मिली।

मैं माह दिसंबर 1950 के शुरू में ही मुज़फ़्फ़राबाद से चौथी और आख़री बार लाहौर आया। उस वक़्त मेरे पास दो जोड़ कपड़े, एक-दो कंबल और कुछ नक़दी थी जो दाख़िले और दीगर ज़रूरियात के लिए कम से कम थी। आगे के लिए बस ख़ुदा पर भरोसा था। लाहौर पहुंच कर उस रात मैं YMCA के होस्टल में ठहरा। दूसरे दिन सुबह ही दयाल सिंह कॉलेज के दफ़्तर पहुंच कर अपने दाख़िले के लिए उस कॉलेज के फ़ार्म मुकम्मल कर के फ़ीस वग़ैरा देने के लिए मैं ऑफ़िस के बड़े बाबू की ख़िदमत में हाज़िर हुआ। वो दरम्याना उम्र के थे और उन्होंने चश्मा पहन रखा था। मुझे देखते ही उन्होंने चश्मा नाक की फंक तक सरका लिया और मुझे सिर से पांव तक घूर कर देखते हुए तन्ज़ और नफ़रत भरे लहजे में बोले, 'चरन-जीत-लाल।' उनका रवैया और गुफ़्तगू का ज़हर भरा लहजा देख कर मैं अज़ हद परेशान हो गया और कदरे घबरा भी गया। दफ़्तर के बाक़ी लोग भी ये सुन कर मुझे नफ़रत भरी निगाहों से देखने लगे जैसे मैं इंसान न हो कर उनकी तवक़्क़ो के ख़िलाफ़ कोई अजीब मख़लूक हूं। मैंने जल्दी-जल्दी दाख़िले की फ़ीस जमा करवा कर दूसरे लवाज़मात मुकम्मल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

कराए। उसके बाद मैं वहां नहीं रुक सका और घबराहट में एक खेल के मैदान में जा कर बैठ गया। खेल के मैदान में बैठ कर मैं सोचने लगा। मुझे पहले दिन ही ऐसी घबराहट हो रही थी जबकि उस कॉलेज में तालीम हासिल करने के लिए मुझे वहां दो साल का वक़्त गुज़ारना था। इससे पहले भी मैंने अपने गांव कमलकोट में इससे बदतर हालात में बहुत दिन गुज़ारे थे जो सचमुच मौत की वादी थी लेकिन ऐसी घबराहट और ज़िल्लत का अहसास कभी नहीं हुआ था। वहां सभी गांव वाले अपनों की तरह प्यार करते थे। कॉलेज के सुप्रिंटेंडेंट के हाथ में बंदूक नहीं थी कलम था, लेकिन उनकी आंखों और ज़बान से ज़हरीली और कटीली गोलियां चलती थीं और मैं उनकी नज़रों का सामना नहीं कर पा रहा था। ऐसी ही ज़हरीली कटीली निगाहें दफ़्तर के बाकी लोगों की भी थीं। मुझे मैदान में बैठे-बैठे ऐसा लगा जैसे आते-जाते सब लोग मुझे घूर-घूर कर देख रहे हों और पुकार रहे हों कि ये चरन-जीत-लाल है, ये ग़ैर मवाफ़िक मख़लूक़ है। यहां लाहौर में मैं एक पिदरी शफ़क़त रखने वाली हस्ती से भी वाकिफ़ था। ये डॉ. बशीर अहमद साहब थे जो मुझे बेटे की तरह प्यार करते थे। उन्होंने मुझसे कहा था कि मैं उनके यहां ही रहूंगा। उनके ज़ेरे-साया रह कर मैं इस सब घूरने वाली नज़रों से बच सकता था। बदकिस्मती से वो उस वक़्त कुछ अर्से के लिए वहां से सात समंदर पार जर्मनी गए हुए थे।

मैं इससे पहले तीन बाहर लाहौर आ चुका था लेकिन तब कोई नहीं जानता था कि मैं चरन-जीत-लाल हूं बल्कि मेरी हैसियत एक अजनबी इंसान की थी। मेरी असलियत कोई नहीं जानता था। लेकिन अब तो मैं यहां तालीम हासिल करने के लिए आया था और मुझे काफ़ी अर्सा यहां गुज़ारना था और वो भी चरन-जीत-लाल नाम के साथ जिसे हर कोई घूर-घूर कर नफ़रत से देखता था। इस तरह मैं अक्तूबर 1947 से ले कर सारे वाकेआत को याद करता रहा और मेरे मेहरबान दोस्तों, अज़ीज़ों और साथियों का सुलूक एक-एक कर के मेरी नज़रों के सामने घूमने लगा। माज़ी के तसव्वुरात और ज़हनी उलझन में तकरीबन शाम हो गई। मैं YMCA होस्टल जाने की भी हिम्मत नहीं कर सका। कुछ सहारा ढूंढ़ने के लिए डी ए वी कॉलेज के रिकवरी कैंप के कमांडर मेहता साहब के पास चला गया। मैं उनसे पहले भी मिलता रहा था और वो मुझे अच्छी तरह से जानते थे। मैं बहुत देर तक उनसे बातचीत करता रहा

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

जिससे काफ़ी सुकून मिल गया। मेहता साहब ये बात अच्छी तरह जानते थे कि मेरे हर काम के पीछे एक ही मकसद था कि किसी तरह अंबूर कैंप में रहने वाले अपने साथी पनाहगुज़ीनों को हिंदुस्तान पहुंचा सकूं। उन्होंने इस बार भी हमेशा की तरह यही मशवरा दिया कि मैं हिंदुस्तान चला जाऊं क्योंकि वहां जा कर रिकवरी ऑर्गेनाइज़ेशन के ज़रिए से इस मकसद को हल करवा सकूंगा। चुनांचे हुआ भी ऐसा ही। मेरे हिंदुस्तान आने के बाद मृदुला बहन की मदद से मैं उन सब को हिंदुस्तान लाने में छह माह के अंदर-अंदर ही कामयाब हो गया जिसका मुझे भी यकीन नहीं था।

मैं पाकिस्तान मकबूज़ा कश्मीर का रहने वाला था, इसलिए मेरे हिंदुस्तान भेजने की इस अड़चन को मेहता साहब ने इस तरह हल किया कि मुझे फ़र्ज़ी तौर पर रावलपिंडी से रिकवर हो कर आई हुई एक बूढ़ी औरत वीरान देवी का बेटा ज़ाहिर किया। दूसरे दिन सुबह ही पाकिस्तान सिक्योरिटी पुलिस का अफ़सर हमें देखने आया। उसने मुझे बूढ़ी औरत वीरान देवी का बेटा तस्लीम कर लिया और हमें हिंदुस्तान भेजने की इजाज़त दे दी गई। हम दस-पंद्रह रिकवर किए गए पनाहगुज़ीन ग्यारह बजे के करीब वहां से ट्रक में अमृतसर के लिए रवाना हो गए और दोपहर तक अमृतसर ट्रांज़िट कैंप में पहुंच गए। इस तरह मेरी कोई हज़ार दिन की दास्ताने-असीरी ख़त्म हो गई जिसके साथ ही मेरी कच्ची-पक्की पाकिस्तानी कौमियत भी ख़त्म हुई। वैसे भी पाकिस्तान के आईन की दफ़ा 257 की रू से पाकिस्तान की सरदारी या अमलदारी आज़ाद कश्मीर पर उस वक़्त ही अमल में आएगी जब रियासत के बाशिंदे पाकिस्तान के साथ इल्हाक करने का फ़ैसला करेंगे। पाकिस्तान का आईन अपनी सल्तनते-जम्हूरी में आज़ाद कश्मीर को शामिल नहीं करता। बहरहाल मैं अब हिंदुस्तान का शहरी बन गया था जबकि आज़ाद कश्मीर के एक्ट मजरिया 1974 की रू से वही शख़्स वहां इंतेख़ाब में हिस्सा ले सकता है या सरकारी नौकरी का हकदार हो सकता है जो पाकिस्तान के नज़रिये और रियासत के इल्हाके-पाकिस्तान के साथ तसव्वुर पर एतेकाद रखता हो।

मेरा कसमपुर्सी की हालत में लाहौर आने की यादों का सिलसिला उस वक़्त टूट गया जब डॉक्टर क्लेर और डॉक्टर डार चंद दूसरे डॉक्टरों के साथ हल्ला-गुल्ला करते और ख़ुशी से चहकते हुए कमरे में दाख़िल हुए। उस वक़्त रवि बाबा की भी नींद खुल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गई। मुझे अहसास हुआ कि मैं अब कसमपुर्सी की हालत में नहीं हूं बल्कि ठाठ से लाहौर के एक पांच सितारा होटल के कमरे में मुक़ीम हूं। लेकिन उसके पलंग के स्प्रिंगदार और लचकदार विस्तर पर मुझे नींद नहीं आ रही थी और कमर में दर्द हो रहा था जिसके लिए मुझे निम्युलिड की गोली खानी पड़ी।

हमें वचपन में सेहत कायम रखने के लिए मौसमे-वहार की आमद से पहले ही हकीम साहव जमाल गोटे का घोल पिलाते थे जिससे अंदर की गंदगी निकल जाए और मौसमे-वहार की ताज़गी से अच्छी सेहत वन सके। इसी तरह योगी लोग अन्त:करण को शुद्ध और निर्मल करने के लिए मुंह के रास्ते से एक लंवा मलमल का कपड़ा डालकर आंतों की सफ़ाई करते हैं जिसे योग में नोली क्रिया कहते हैं। हमारे डॉक्टर साहिवान ने भी अपनी दिन भर की ख़ुश्क और घुटन भरी ज़िंदगी की तल्ख़ियों से छुटकारा पाने के लिए आवे-तल्ख़ की महफ़िल सजाई थी। इस महफ़िल में नॉन-वैज के साथ आवे-तल्ख़ और आवे-शीरीं के जाम चलते रहे जिससे उनकी तमाम तल्ख़ियां क़हक़हों और किलकारियों की शक्ल में फूट रही थीं। वो उस वक़्त आला पाये के डॉक्टर नहीं दिखाई दे रहे थे वल्कि आम इंसानों की तरह ही अनाप-शनाप बोल रहे थे और ख़ुशी से चहक रहे थे। मैंने डॉक्टर क्लेर को इससे पहले कभी इतना ख़ुशो-ख़ुर्रम नहीं देखा था। इससे मुझे भी ख़ुशी वाशी मयस्सर हुई। जहां वो सभी नॉन-वैज से लुत्फ़ उठा रहे थे, मेरे लिए भी उन्होंने वटर टोस्ट और फ्राई पनीर मंगवाया हुआ था। मैं भी उसके साथ आवे-संतरा से लुत्फ़ ले रहा था और उनके क़हक़हों से मुसर्रत महसूस कर रहा था।

इस महफ़िल के वाद रवि वावा और डॉक्टर साहिवान किसी ख़ास रेस्टोरेंट में डिनर करने के लिए चले गए और मैं कमरे में ही लेट गया लेकिन स्प्रिंगदार पलंग पर निहायत मोटे डन्लप के गद्दे इतने लचकदार थे कि मुझे करवट वदलने से कमरे में शदीद होने लगा था। इसलिए इन गद्दों पर सोने में मुझे वहुत दिक़्क़त हो रही थी। नींद आना तो दरकिनार मुझे कमर में दर्द इस शिद्दत का हो रहा था जो मेरी वर्दाश्त से वाहर था। मैंने फ़र्श पर कंवल विछा कर सोने की कोशिश की लेकिन वेसूद। इस तरह कोई वारह वजे होंगे जव डॉक्टर क्लेर और रवि वावा डिनर खा कर वापस आए तो मैंने अपनी मुश्किल वताई। उन्होंने हाउस कीपिंग वालों को वुला कर कुछ करने के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लिए कहा। आख़िर उन्होंने मेरे पलंग पर गद्दे के नीचे एक हार्ड बोर्ड का तख़्ता रख दिया जिससे मुझे कुछ राहत मिली। यहां मुझे एक किस्सा याद आ रहा था। एक बार एक मछुवारे की ख़ूबसूरत जवान बेटी से एक शहज़ादे को इश्क़ हो गया। वो शहज़ादा उस मछुवारे की हसीन बेटी से शादी कर के उसे अपने महल में ले गया जहां उसकी ख़्वाबगाह इत्र और लोबान की ख़ुशबू से मुअत्तर थी। उस ख़ुशबूदार फ़िज़ा में उस हसीन दोशीज़ा की नींद ही ग़ायब हो गई जिससे शहज़ादा निहायत परेशान हो गया। आख़िरकार शाही हकीम से मशवरा करना पड़ा। शाही हकीम की हिदायत के मुताबिक़ उस हसीन दोशीज़ा के सरहाने एक मछली से भरा हुआ टोकरा रखा गया। इस तरह से मछलियों की सड़न की बू से उस दोशीज़ा को गहरी नींद आ सकी मेरा भी कुछ ऐसा ही हाल था।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

7

लाहौर दूसरा दिन

लाहौर में हमारा दूसरा दिन 18 दिसंबर था। उस दिन मुझे और रवि बाबा को जनाब हक़ साहब के साथ लाहौर घूमने जाना था। मुझे लाहौर में घूमने में कुछ ख़ास दिलचस्पी नहीं थी। मैं सिर्फ़ अपनी निहायत ही काबिले-ताज़ीम शख़्सियत जनाब डॉक्टर बशीर अहमद साहब के दीदार करने की ख़्वाहिश रखता था। मैंने लाहौर आते ही सबसे पहले उनके मुताल्लिक दरियाफ़्त किया था लेकिन सब बेसूद रहा। अब मुझे हक़ साहब ने यकीन दिलाया था कि वो ज़रूर ही उनके मुताल्लिक मालूम करेंगे। लाहौर में बहुत सी काबिले-दीद जगहें हैं लेकिन मेरे पास सिर्फ़ एक ही दिन था जिसको मैं ख़ास तौर पर डॉक्टर बशीर अहमद साहब की खोज के लिए ही वक़्फ़ करना चाहता था।

हम नाश्ता करने के बाद हक़ साहब के साथ उनकी कार में चल दिए। डॉक्टर क्लेर सुबह नाश्ता किए बग़ैर ही कांफ्रेंस के लिए निकल गए थे। कार हक़ साहब के मैनेजर जमील साहब चला रहे थे। वो लाहौर के चप्पे-चप्पे से वाकिफ़ थे। हम होटल से निकल कर लाहौर के किले की जानिब रवाना हुए। रास्ते में मीनारे-पाकिस्तान दिखाई दिया। ये 1946 की उस जगह तामीर किया गया था जहां 25 मार्च को करारदादे-पाकिस्तान पास की गई थी जिसकी रू से पाकिस्तान की मुमलिकत का मुतालिबा किया गया था। ये मशहूर आर्किटेक्ट मूरत ख़ान की देखरेख में तामीर हुआ था। मीनारे-पाकिस्तान के सामने ही लाहौर का तारीख़ी किला है।

इस किले की बनावट की इब्तेदा के मुताल्लिक मुसद्दिका जानकारी दस्तियाब नहीं है लेकिन आसारे-कदीमा की तहकीकात के दौरान इस की खुदाई में हिंदू दौर के आसार के सुबूत भी मिले हैं। इसके अलावा मुहम्मद ग़ज़नी के वक़्त के सिक्के भी पाए गए हैं। बहरहाल मौजूदा किले की बुनियाद साबिका पुराने किले को मिस्मार करके

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

अकबरे-आज़म ने रखी थी। इसका मस्ती दरवाज़ा अकबर ने ही बनवाया था और किले की चारदीवारी की तामीर भी अकबर के अहद में ही हुई मानी जाती है। इसकी बुनियाद के मुताल्लिक कुछ वसूक से कहना मुश्किल है लेकिन सभी मुगल बादशाह अपने-अपने दौरे-हुकूमत में इस किले की तामीर में इज़ाफ़ा करते रहे। उसके बाद सिखों के दौरे-हुकूमत में दरियाए-रावी की जानिब इसकी हदबंदी की गई और कुछ इमारतों पर ऊपर की मंज़िलें तामीर की गईं। उसके बाद इस पर विदेशी सरकार का कब्ज़ा होने पर उन्होंने इसको अपनी फ़ौजी छावनी के तौर पर इस्तेमाल किया। फिर इसको महकमा आसारे-कदीमा के हवाले कर दिया गया।

ये किला लाहौर के आसारे-कदीमा में सबसे ज़्यादा काबिले-दीद है। इसके बहुत से हिस्से निहायत ही जाज़िबे-नज़र हैं जैसे शीश महल झरोखा, मोती मस्जिद, नौलखा और शाहर बुर्ज। दीवाने-आम की पिछली तरफ़ एक ख़ूबसूरत बाग़ है जिसमें शहंशाह जहांगीर की अदालत लगती थी। इसके सामने एक पानी का तालाब है जिसके दरम्यान में बत्तीस से ज़्यादा फ़व्वारे हैं जो इसकी ख़ूबसूरती को नुमायां वुसअत देते हैं। मोती मस्जिद गो बहुत छोटी है लेकिन ये निहायत ही शफ़्फ़ाफ़ संगमरमर से तामीर हुई है जिसने इसको मोती जैसी चमक-दमक अता की हुई है। शाह बुर्ज के मग़रिब की जानिब बंगला है जो नौलखा के नाम से मशहूर है क्योंकि उस वक़्त इसकी तामीर में नौ लाख रुपया सर्फ़ हुआ था। इसका निहायत ही ख़ूबसूरत सहन बिल्कुल ख़ालिस और शफ़्फ़ाफ़ संगमरमर का बना हुआ है। इसकी दीवारों पर की गई चित्रकारी और छत पर शीशे और कीमती पत्थरों की सजावट शायद सिख दौर का इज़ाफ़ा है। शाह बुर्ज की दीवारों पर भी निहायत ही नफ़ीस चित्रकारी की हुई है। ये चित्रकारी जहांगीर और शाहजहां के दौर में हुई थी जो कई सदियां गुज़र जाने के बाद भी अपनी निफ़ासत को कायम रखे हुए है।

मैं तो किले में ख़ास तौर पर राजा लव का मंदिर देखने आया था जो आलमगीरी दरवाज़े के बिल्कुल साथ ही है। ये मंदिर एक छोटा सा चबूतरा है जो बिल्कुल ख़स्ता हालत में है और जिसके रख-रखाव पर कोई ख़ास ध्यान नहीं दिया जान पड़ता है। आलमगीरी दरवाज़े के सामने हुज़ूरी बाग़ के दरम्यान में राजा रंजीत सिंह की बारादरी है। ये सफ़ेद संगमरमर से बनी हुई है। इसके बारह दरवाज़े हैं जिनमें सफ़ेद संगमरमर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के फ़्रेम लगे हुए हैं। यहां राजा रंजीत सिंह अपना दरबार मन्अक़िद किया करता था। अल्लामा इक़बाल मशहूर शायरे-मशरिक़ का जन्म सियालकोट में हुआ था। उन्होंने 1938 में लाहौर में वफ़ात पाई थी। उनका मक़बरा लाल पत्थरों से बना हुआ शाही मस्जिद के बड़े दरवाज़े के क़रीब दरवाज़े के मीनार के साथ 1651 में तामीर किया गया था। इस मक़बरे की दीवारों पर उनकी तसनीफ़ ज़बूरे-अंजुम के बंद लिखे हुए हैं। हुज़ूरी बाग़ और क़िले के सामने शाही मस्जिद है। इस मस्जिद को 1674 में फ़िदाई ख़ान ने तामीर करवाया था। मस्जिद के चार कोनों में आठ कोने आकार के चार मीनार हैं जिनके ऊपर गुंबदनुमा गैलरी बनी हुई है जो कि गुलदस्ते की शक्ल की है। मस्जिद के सहन में एक पंद्रह मीटर चौकोर तालाब है। मस्जिद में हज़रत मुहम्मद, उनकी बेटी हज़रत फ़ातिमा और इस्लाम के दीगर सूफ़ियों के 27 आसार महफ़ूज़ रखे हुए हैं। क़िले के दरवाज़े की मग़रिब की जानिब सिखों का अहाता है।

लाहौर के साथ मेरी एक पुरानी याद जुड़ी हुई है। जब मैं राजौरी में था, तो मैं ख़ास तौर पर वहां से पंद्रह किलोमीटर की दूरी पर चनगस के मुक़ाम पर जहांगीर का मक़बरा देखने गया था। लोगों का कहना था कि उस जगह रात को शहंशाह जहांगीर की रूह इंसानी शक्ल में कई बार देखी गई है। क़िस्सा ये है कि जहांगीर की मौत श्रीनगर से वापस आते हुए 1627 में राजौरी के मुक़ाम पर हुई थी। ये ख़बर मलिका नूर जहां ने पोशीदा रखी लेकिन जब जहांगीर की लाश से कुछ सड़ांद आनी शुरू होने लगी तो उसके पेट से उसकी आंतें निकाल कर चनगस के मुक़ाम पर दफ़्ना दी गई। वहां पर भी क़िले में जहांगीर का मक़बरा है। उसके बाद जहांगीर की लाश को लाहौर लाया गया और उसकी वसीयत के मुताबिक़ उसकी मंज़ूरे-नज़र मलिका नूर जहां के ख़ास बाग़ यानी दिलकश बाग़ में संगमरमर और सुर्ख़ पत्थरों के ऊंचे थड़े पर दफ़्न किया गया जहां उसका मक़बरा बना हुआ है। उसके इतराफ़ में एक सौ अस्सी छोटे-छोटे कमरे हैं और चार कोनों पर तक़रीबन तीस मीटर ऊंचे और सफ़ेद मार्बल के बने हुए मीनार हैं जो कि दूर-दूर से दिखाई देते हैं। ये मक़बरा कोई 28 हेक्टेयर के बाग़ में बना है जो छह हिस्सों में मुंक़सिम है। ये हिस्से फ़सीलों और अन्हार के ज़रिए एक-दूसरे से जुदा किए गए हैं। बाग़ में फूलों के अलावा ज़ेबाइशी और फलदार पौधे लगे हुए हैं। इस मक़बरे की दीवारों पर निहायत ही ख़ूबसूरत तहरीर में अरबी में आयतें तहरीर की गई हैं।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मेरा ख़ास मकसद तो डॉ. बशीर अहमद साहब की खोज-ख़बर करनी थी। इसके लिए सबसे पहले हम दयाल सिंह कॉलेज गए जहां मैंने दिसंबर 1950 में दाख़िला लिया था। अब उस कॉलेज को पहचान पाना भी मुश्किल हो गया था। वहां इस कदर इमारात बिल्कुल नई-नई बनी हुई थीं कि पहले वाले कॉलेज का नक़्शा जो मेरे ज़हन में था बिल्कुल बदला हुआ दिखाई दे रहा था। बहरहाल हम कॉलेज के अंदर दाख़िल हो कर प्रिंसिपल साहब के कमरे में गए। वो मौजूद नहीं थे, इसलिए हम वाइस प्रिंसिपल साहब की ख़िदमत में हाज़िर हुए। उनका कहना था कि डॉक्टर साहब के मुताल्लिक पूरी जानकारी शोबा-ए-कैमिस्ट्री के यूनिवर्सिटी कैंपस से ही मिल सकती है, लिहाज़ा हम वहां चले गए। ये कैंपस या इंस्टीट्यूट ऑफ़ कैमिस्ट्री काइदे-आज़म कैंपस में वाके है। वहां हम प्रो. डॉक्टर चौधरी जमील अनवर साहब से मिले जो कि शोबा-ए-कैमिस्ट्री के डायरेक्टर हैं। प्रोफ़ेसर साहब ने बड़े तपाक और गर्मजोशी के साथ मुझे खुशआमदीद कहा और मेरी तमाम बात बड़े ध्यान के साथ निहायत ही दिलचस्पी से सुनी। उनका कहना था, जैसा कि उनके कमरे में लगे हुए बोर्ड से भी अयां था, कि डॉ. बशीर अहमद साहब 1954 में वहां से रिटायर हो गए थे और बाद में कुछ अर्से के लिए लाहौर यूनिवर्सिटी के वाइस चांसलर के ओहदे पर भी मुकर्रर रहे लेकिन अफ़सोस कि वो अब फ़ौत हो चुके हैं। उनके ख़ानदान में अब कौन लोग हैं इसका किसी को इल्म नहीं था और न ही अब है। इससे मुझे अंदाज़ा हुआ कि वो मुझे अपने बेटे की तरह प्यार करते थे और मुझे अपने पास ही रखना चाहते थे, शायद उनकी अपनी कोई औलाद नहीं थी और वो मुझे ही अपना जानशीन बनाना चाहते थे। लेकिन जब मैं लाहौर आया तब वो वहां मौजूद नहीं थे और मुझे मजबूरी में वहां से भाग कर हिंदुस्तान आना पड़ा था।

ये सब जान कर मुझे गहरा सदमा हुआ। और हक साहब इस सदमे के असर को कम करने के लिए हमें शालीमार बाग़ ले गए लेकिन मुझे फिर भी सदमे से सुकून नहीं मिल रहा था। मैं बार-बार ये सोच रहा था कि काश हमारे मुल्कों की सरहदों को तकसीम करने वाली इन लकीरों को पाटना मुमकिन हो गया होता ताकि मुझे अपने मुख़लिस बुज़ुर्गों से जिन्होंने आज से सत्तावन साल कब्ल मुझे पिदरी शफ़कत से नवाज़ा था और मेरी उस वक़्त की वीरान् ज़िंदगी में उनकी उस शफ़कत ने मेरे बुझे हुए दिल

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

पर आबे-हयात का असर दिखाया था, उन से मिलने मेरे लिए वक़्त रहते आना मुमकिन हो पाता। क़िस्मत की रेखाओं की तरह ये सरहद की लकीरें अटल हो चुकी हैं। ये गहरी लकीरें उन मुमलिकतों के दरम्यानी फ़ासले दराज़ करने में तो कामयाब हो सकी हैं लेकिन आरपार के लोगों की आपसी मुहब्बत और दोस्ती की भूख और चाह में कमी लाने में नाकाम रही हैं। आज सत्तावन साल बाद मैं अपने पिदर समान डॉ बशीर अहमद साहब की खोज-ख़बर करने के लिए आने में तो कामयाब हो सका जब मैं उस शफ़क़त से दायमी तौर पर महरूम हो गया था।

लाहौर में सैरो-सय्याहत और तफ़रीह के बेहतरीन मुक़ामात हैं जिनमें शालीमार बाग़, बाग़े-जिन्नाह, हरन मीनार, ज़ियारत दाता गंज बख़्श साहब, ज़ियारत माधो लाल हुसैन और लाहौर म्यूज़ियम क़ाबिले-ज़िक्र हैं लेकिन इस थोड़े वक़्त और बुझे हुए दिल के साथ मुझे कुछ भी देखने की चाह नहीं रही थी, इसलिए हम वापस होटल आ गए। होटल आने पर हमें मालूम हुआ कि जनाब मुहम्मद जावेद शफ़ी साहब का मेरे लिए दो-तीन बार फ़ोन आ चुका है और वो मुझसे मिलना चाहते हैं। मेरी तो उनसे कोई पहचान नहीं थी लेकिन मैंने उन्हें टेलीफ़ोन पर इत्तेला दी कि आज शाम को उनसे मिल सकता हूं। नीज़ दूसरे दिन सुबह ही मैं इस्लामाबाद रवाना हो जाऊंगा। चुनांचे उन्होंने गाड़ी इरसाल की और मैं रवि बाबा के साथ उनके बंगले मॉडल टाउन में उनसे मिलने पहुंच गया। जनाब शफ़ी साहब जनाब नवाज़ शरीफ़ साबिक़ वज़ीरे-आज़म पाकिस्तान के सौतेले भाई हैं। नवाज़ शरीफ़ साहब के वालिद के अलावा उनके छह बड़े भाई थे। इन सातों भाइयों नें मॉडल टाउन में सात आलीशान बंगले सोलह-सोलह कनाल अर्ज़ी पर एक ही लाइन में बनवाए हुए हैं ताकि एक दूसरे को इन बंगलों के अंदर से ही देख सकें। जब तक नवाज़ शरीफ़ साहब वज़ीरे-आज़म नहीं बने थे तब तक इन सातों भाइयों के ख़ानदानों का इकट्ठा ही कारोबार इत्तेफ़ाक़ ग्रुप ऑफ़ कंपनीज़ के नाम से था लेकिन जनाब नवाज़ शरीफ़ साहब के वज़ीरे-आज़म बनने के बाद ये कारोबार अलाहदा अलाहदा हो गया था। अब जनाब मुहम्मद जावेद शफ़ी साहब अल-शफ़ी ग्रुप ऑफ़ कंपनीज़ और इत्तेफ़ाक़ शूगर मिल और कश्मीर शूगर मिल के चेयरमैन हैं। वो मुझसे पुरख़ुलूस ढंग से मिले और काफ़ी देर तक बातचीत करते रहे। मैं समझ नहीं पा रहा था कि वो मुझ से इतने तपाक से किसलिए पेश आ रहे हैं,

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लेकिन बातों ही बातों में उन्होंने फ़रमाया कि उनका एक बहुत बड़ा अस्पताल भी है जिसको वो डॉक्टर क्लेर को दिखाना चाहते हैं। उनकी इस बात से मैं उनका मकसद समझ सका। मैंने उनसे अर्ज़ किया कि मैं सुबह इस्लामाबाद जा रहा हूं और डॉक्टर साहब से आपके अस्पताल के मुताल्लिक कह दूंगा। दीगर आप ख़ुद भी उनसे बात कर लें तो वो ज़रूर ही आपके अस्पताल में आएंगे। जनाब शफ़ी साहब खाना खाने के लिए इसरार कर रहे थे लेकिन हमने उनसे ये कह कर इजाज़त हासिल की कि डॉक्टर साहब हमारा इंतज़ार कर रहे होंगे। उनकी गाड़ी हमें होटल वापस छोड़ गई। जनाब शफ़ी साहब की मुलाकात से मुझे एक साधु महात्मा का किस्सा याद आ गया। एक साधु महात्मा के आश्रम में एक निहायत ही लज़ीज़ और मीठे शहतूत का पेड़ था। वैसे तो महात्मा जी के पास कोई भक्त नहीं आता था लेकिन जब उनके आश्रम के पेड़ पर मीठे और लज़ीज़ शहतूत पक जाते थे तब उनके आश्रम में भक्तों का तांता बंध जाता था। सारे भक्त आते ही महात्मा जी को नमो: नारायण कह कर प्रणाम करते थे। वो इस नमो: नारायण का जवाब सिर्फ़ "तूतन को" कह कर देते थे जिससे वो ये ज़ाहिर करते थे कि भक्तों का नमो: नारायण उनके लिए नहीं है बल्कि तूत यानी शहतूत के लिए है। इसलिए वो ये प्रणाम सीधे शहतूत को ही करें, उनको करने की ज़रूरत नहीं है। हमारे आने के थोड़ी देर बाद डॉक्टर साहिबान भी आ गए और उस दिन भी महफ़िले-आबे-तल्ख़ कुछ देर के लिए चलती रही। मेरा मन इस महफ़िल में शरीक होने के लिए बिल्कुल तैयार नहीं था लेकिन मजबूरन बटर टोस्ट और फ्राई पनीर उन के साथ खाना पड़ा।

डॉक्टर साहिबान और रवि बाबा डिनर के लिए किसी अच्छे रेस्टोरेंट में तशरीफ़ ले गए और में कमरे में ही अपने बिस्तर पर लेट गया और सोचने लगा कि ये ठीक है कि इन दोनों मुल्कों की सरहदों की लकीरें गहरी हो गई हैं लेकिन मुझे अपने आप पर भी गुस्सा और मलाल हो रहा था कि मैंने भी उस पिदरी शख़्सियत की खोज-ख़बर करने की आज तक कोई ठोस कोशिश नहीं की जिस तरह से आज की थी। जो तड़प आज मुझ में डॉ. बशीर अहमद साहब के दीदार के लिए मौजज़न थी वो आज से पहले कहां थी। दिन भर का थका हुआ था इसलिए इन्हीं ख़यालात और तसव्वुरात के ताने-बाने में मुझे नींद ने दबोच लिया।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

8
लाहौर से इस्लामाबाद

मुझे 19 दिसंबर की सुबह की फ़्लाइट से लाहौर से इस्लामाबाद आना था जबकि डॉ क्लेर और रवि बाबा को 20 दिसंबर को कार के ज़रिए लाहौर से इस्लामाबाद के लिए रवाना होना था। मैं सुबह ही नहा-धोकर और चाय का प्याला पी कर इस्लामाबाद के लिए फ़्लाइट पकड़ने के लिए तैयार हो गया। इतनी देर में हक़ साहब का भान्जा अपनी कार ले कर मुझे लाहौर एयरपोर्ट तक ले जाने के लिए आ गया। उस वक़्त कुछ बूंदा-बांदी हो रही थी। लाहौर एयरपोर्ट भी हमारे होटल से तकरीबन बीस-पच्चीस किलोमीटर दूर था लेकिन सुबह ट्रैफ़िक कम था। रास्ते में निहायत ही साफ़-सुथरी कालोनियां भी नई बनी हुई थीं। इनमें डिफ़ेंस कालोनी काबिले-ज़िक्र है जो निहायत दिलकश और जाज़िबे-नज़र होने के साथ करीने से बनी हुई है। मेरी फ़्लाइट लाहौर से चल कर कोई एक घंटे में इस्लामाबाद पहुंच गई।

इस्लामाबाद को सदर मुहम्मद अय्यूब ख़ां ने 1961 में पाकिस्तान के दारुस्सल्तनत के तौर पर बसाना शुरू किया था। ये शहर दुनिया के जदीदतरीन हरे-भरे बनाए गए दारुलख़िलाफ़ों में एक है। इसकी हरियाली और तरतीब अपनी मिसाल एक ही है। इसकी ख़ूबसूरती और जाज़िबे-नज़र होने का राज़ इस बात में है कि इसके क़ुदरती माहौल और बेशबहा कीमती कुदरत के अता किए हुए असासे को मख़सूस रखा गया है। इसकी पुश्त पर पिठूहार इलाके की मारगला पहाड़ियां हैं। आसारे-क़दीमा के माहिरीन की राय है कि पिठूहार इलाके की तहज़ीब इतनी क़दीम है जितनी कि इंसानी तहज़ीब के इरतेक़ा की। इस्लामाबाद का रकबा 910 कि. मी. है, इसकी आबादी दिन-बदिन बढ़ रही है। इस्लामाबाद और रावलपिंडी दो जुड़वां शहर के दो हिस्से हैं, एक क़दीम शहर रावलपिंडी और दूसरा जदीद शहर इस्लामाबाद। रावलपिंडी का रकबा सिर्फ़ 143 किलोमीटर है, ये एक गुंजान शहर है। जबकि इस्लामाबाद का

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रकवा छह-सात गुणा ज़्यादा है लेकिन आवादी रावलपिंडी से कम ही होगी। इसकी ऊंचाई समंदर से पांच सौ से छह सौ मीटर तक है जो रावलपिंडी से ज़्यादा ही है।

इस्लामावाद को अंग्रेज़ी ज़वान के हुरूफ़े-तहज्जी के हिसाव से सैक्टरों में तकसीम किया हुआ है। आगे फिर उनको एवेन्यूज़ में तकसीम किया गया है जो वाद में ब्लॉक में मुन्कसिम हैं जिनको फिर स्ट्रीट के लिहाज़ से ज़ाहिर किया गया है। इस तरह से इस जदीद शहर की तरतीब निहायत ही उसूले-इल्म के मुताविक है जिससे किसी भी ऐड्रेस को ढूंढ़ना बिल्कुल आसान है। मिसाल के तौर पर मेरे दोस्त मलिक मुज़फ़्फ़र साहव जहां मुझे ठहरना था उनका ऐड्रेस ये है: **73** मलिक मंज़िल, स्ट्रीट **24**, एफ़ **10/1**, इस्लामावाद। इस ऐड्रेस में पूरी जानकारी एक उसूल के मुताविक है जिसकी वजह से मेरे किसी भी मुलाकाती को मुझे मिलने में कोई दिक़्क़त नहीं हुई। ये कुल सैक्टर ए से आई तक हैं। वहुत से सैक्टर अभी भी मुकम्मल तौर पर तामीर होने वाक़ी हैं। उनकी तामीर का सिलसिला जारी है। इन सब सैक्टरों में एफ़ और जी सवसे अहम हैं जो मुकम्मल तौर पर तामीर हो चुके हैं। इनको इस्लामावाद सेंट्रल के नाम से पुकारा जाता है जिनमें शालीमार और रामना की रिहाइशी इमारतें हैं। इनमें ख़रीदारी के मराकिज़ भी हैं। वैसे तो हर एक सैक्टर के अपने-अपने ख़रीदारी के मराकिज़ हैं।

रामना के एवेन्यू **5** में पाकिस्तान की हुकूमत का सेक्रेटेरिएट और ऐवाने-सदर के साथ-साथ पालियर्मिंट की इमारत है। ये इमारतें फ़ने-तामीर के कमाल को उजागर करती हैं। इससे थोड़ा आगे डिप्लोमैट एन्क्लेव है जहां सभी वैरूनी ममालिक के सिफ़ारतख़ाने हैं। इसकी दूसरी जानिब सभी सूवों के अपने-अपने गैस्ट हाउस हैं। यहां आज़ाद कश्मीर का और प्रिंस आग़ा ख़ां का भी गैस्ट हाउस मौजूद है। इस शहर की आबादी में दिन-वदिन इज़ाफ़ा हो रहा है। दूसरी जानिव मरी रोड पर नई-नई वस्तियां वन रही हैं।

इस्लामावाद में ताज महल की तरह एक अजूवा दिखाई देने वाली इमारत शाह फ़ैसल मस्जिद है। ये मस्जिद फ़ने-तामीर का एक नादिर नमूना और हैरत का मुरक़्क़ा है। इसकी तामीर में जो मैटीरियल इस्तेमाल में लाया गया है वो ज़्यादातर वाहर से दरामद हुआ है। यहां तक कि फ़र्श पर लगी हुई चिप्स की टाइलें भी वाहर से आई हुई हैं। ये शीशे की तरह शफ़्फ़ाफ़ हैं जिनकी चमक दायमी है। मस्जिद की छत पर

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और अंदर भी कई जगह सोने का इस्तेमाल किया गया है। सोने के हुरूफ़ से कुरान शरीफ़ की आयात दीवारों पर तहरीर की हुई हैं। मस्जिद के अंदर जाने की इजाज़त सिर्फ़ जुमे के दिन की नमाज़ अदा करने के लिए होती है। बाकी दिन इस मस्जिद के दरवाज़े बंद रहते हैं। लेकिन बड़े-बड़े शीशे के फ्रेम जो मस्जिद के चारों इतराफ़ लगे हुए हैं उनसे अंदर का सब कुछ साफ़ दिखाई देता है। सामने एक ख़ूबसूरत तालाब है जहां नमाज़ी वुज़ू करते हैं। बाहर जूते रखने का काफ़ी अच्छा इंतज़ाम है। जदीद क़िस्म के बैतुल्ख़ला मर्दों और औरतों के लिए अलाहदा अलाहदा बनाए हुए हैं। मस्जिद के चार कोनों पर चार मीनार हैं जो ख़ला में भेजे जाने वाले रॉकेट की शक्ल के हैं। ऐसा मालूम होता है कि ये फ़िज़ा में छोड़े जाने के लिए तैयार हैं। मस्जिद की पिछली जानिब इस्लामी यूनिवर्सिटी की इमारत है।

मस्जिद के साथ ही दामने-कोह है जो सैरो-तफ़रीह के लिए निहायत ही मुनासिब मुक़ाम है। ये मारगला पहाड़ियों पर एक काबिले-दीद और जाज़िबे-नज़र जगह है। यहां से इस्लामाबाद का पूरा शहर दिखाई देता है। यहां से शहर का नज़ारा काबिले-दीद है। यहां से शहर की हरियाली और अश्जार की बहुतात निहायत ही दिलकश लगती है। यहां के रेस्ट हाउस में सार्क ममालिक के सरबराहों की कांफ्रेंस मुन्अक़िद हुई थी। इस जगह को काफ़ी संवारा और सजाया गया है। यहां कुदरती ख़ूबसूरती की भी कोई कमी नहीं है। यहां से थोड़ी दूरी पर गुलाब और चमेली के फूलों का बहुत बड़ा नख़लिस्तान है जो पचास एकड़ रकबे में फैला हुआ निहायत ही ख़ूबसूरत और दिलकश बाग़ है। कहा जाता है कि इस नख़लिस्तान में ढाई सौ गुलाब और दर्जनों चमेली की इक़साम नसब हैं। यहां अक्सर फूलों के मुक़ाबले मुन्अक़िद होते रहते हैं। इन मुक़ाबलों में फूलों के शायक़ीन इन मुख़्तलिफ़ इक़साम के फूलों का नज़ारा बड़ी दिलचस्पी से करके लुत्फ़अंदोज़ होते हैं।

शंकरपड़ियां इस्लामाबाद की एक मक़बूल सैरगाह ही नहीं है बल्कि इसकी सिक़ाफ़ती ओर तारीख़ी अहमियत भी है। यहां शंकर जैसी पड़ियां यानी बड़े-बड़े बेडौल पत्थर जगह-जगह बिखरे पड़े हैं जिसकी वजह से ही इसका नाम शंकरपड़ियां है। ये मारगला पहाड़ियों के दामन में काफ़ी ऊंचाई पर वाक़े है। यहां जगह-जगह निहायत ही दिलकश और ख़ूबसूरत फूलों के बग़ीचे हैं। इसकी तारीख़ी और

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

सिकाफ़ती दिलचस्पी ये है कि पाकिस्तान में जब कोई वैरूने-मुल्क का सरवराह आता है, तो वो यहां अपने नाम का एक ख़ूबसूरत पौधा लगाता है। चुनांचे यहां चीन, हिंदुस्तान और वाकी कई ममालि के सरबराहान ने अपने-अपने नाम के पौधे नसव किए हुए हैं। जनाव राजीव गांधी जब सार्क कांफ्रेंस में हिस्सा लेने गए थे तो उन्होंने ने भी अपने नाम का एक पौधा यहां लगाया था। ये पौधे ज़्यादातर चेल सनोवर के होते हैं। यहां वैसे भी चेल के दरख़्त वहुत हैं जो फ़िज़ा में ठंडी और भीनी-भीनी हवा बिखेरते हैं। यहां से सारे इस्लामाबाद में बड़े-बड़े जगमगाते विजली के वल्ब और रंगारंग ट्यूबलाइटें वहुत सुहावनी दिखाई देती हैं। यहां से शाह फ़ैसल मस्जिद जगमगाती रोशनी में निहायत ख़ूबसूरत नज़ारा पेश करती है और मस्जिद के विल्कुल सामने मरहूम सदर ज़ियाउल हक का मकबरा है जहां लोग वड़ी तादाद में हाज़री देने आते हैं। ये मकवरा भी मस्जिद की जगमगाती रोशनी में पुरनूर दिखाई देता है।

यहां एक वहुत वड़ा स्पोर्टस कॉम्प्लेक्स भी है जो चीन की मदद से तामीर किया गया है जहां वहुत से आउटडोर और इन्डोर खेलों का ख़ातिरख़्वाह इंतज़ाम किया हुआ है। इस्लामावाद के गिर्दो-नवाह में भी वहुत से सिकाफ़ती, तारीख़ी और मज़हबी सयाहती मुकाम हैं। इस्लामावाद से **25** किलोमीटर के फ़ासले पर तक्षशिला का कदीम सिकाफ़ती और तारीख़ी शहर है। आसारे-कदीमा के लिहाज़ से ये अपना एक ख़ास मुकाम रखता है। ये जगह हज़ारों साल पुरानी गंधार तहज़ीव के फ़ने-तामीर और मूर्ति कला की अमीन है। आज का ख़लाई दौर का इंसान जब यहां पहुंचता है तो वो अपने आप को ढाई हज़ार साल पुराने नौजवान के लवादे में महसूस करता है। यहां आप पूरे कदआवर वुद्ध का सामना करते हैं जिस की वड़ी मख़मूर आंखें देखकर आप हैरान हुए विना नहीं रह सकते। यहां आप की मुलाकात सिकंदरे-आज़म से होती है। यहां आप वौद्ध सम्राट अशोक की भरपूर झलक देखते हैं और आख़िर में महाराजा कनिष्क के दौर के आसार हर सिम्त देखने को मिलते हैं। तक्षशिला का जितना भी तज़करा किया जाए थोड़ा होगा। वहां फ़ने-संगतराशी के नायाव नमूनाजात के अलावा महात्मा वुद्ध की छोटी-वड़ी लातादाद मूर्तियां मिलती हैं। ये ढाई हज़ार साल पुरानी तहज़ीव की अक्कासी करता है। तक्षशिला में आसारे-कदीमा का एक वहुत ही पुराना और ख़ूवसूरत म्यूज़ियम भी है जो देखने से ताल्लुक रखता है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

तक्षशिला से तेरह किलोमीटर के फ़ासले पर हिस अब्दाल यानी पंजा साहब का कस्बा है। यहां पर वो मतवर्रक चट्टान है जिस को गुरु नानक देव ने अपने हाथ से रोक लिया था। इस चट्टान पर गुरु महाराज की उंगलियों के निशान हैं और इसी को पंजा साहब कहा जाता है। इस जगह के नीचे एक साफ़ पानी का झरना है जो एक ख़ूबसूरत पुख़्ता तालाब की शक्ल में बनाया हुआ है। यहां बहुत सी इमारात और एक ख़ूबसूरत गुरुद्वारा भी बना हुआ है जहां हर साल वैसाखी के दिन मेला लगता है जिसमें सिख भाई हज़ारों की तादाद में यात्रा पर आते हैं।

इस्लामाबाद को चीन से मिलाने वाली सड़क शाहराहे-कराकरम शाहराहे-रेशम जो हवेलियां से तामीर की गई है जो इस्लामाबाद से सौ किलोमीटर के फ़ासले पर है। ये पक्की दो रास्ते वाली सड़क **1965** में शुरू होकर पाकिस्तानी फ़ौज के इंजीनियरों ने चीनी माहिरीन की मदद से पंद्रह साल में मुकम्मल की थी। ये शाहराह जोमलियां, ऐबटाबाद, मांसरा, थाकोट, बश्तम, पटन, चलास, जगलोट, गिलगित हन्ज़ा से होती हुई ख़ंजराब दर्रा जो **4602** मीटर की ऊंचाई पर है पार करके चीन की हुदूद में पीराली की चेकपोस्ट पर चीन की हुदूद में दाख़िल होती है। इसको पाकिस्तानी दुनिया का आठवां अजूबा भी मानते हैं जो आठ सौ चार किलोमीटर लंबी है और इस शाहराह पर बुद्ध और गंधार अहद के आसार काबिले-ज़िक्र हैं। ये तकरीबन वही कदीम रास्ता है जिसे सिल्क रूट के नाम से जाना जाता था जिस रास्ते से माज़ी में सेंट्रल एशिया से तिजारत होती थी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

9

सिलसिला-ए-मुलाकात

मैं 19 दिसंबर को इस्लामाबाद एयरपोर्ट पर सुबह 9 वजे के लगभग पहुंच गया था। उसी दिन मेरे अज़ीज़ राजा मुहम्मद असग़र ने जो कि रोज़ाना अंग्रेज़ी अख़बार 'डॉन' के कॉरेस्पांडेंट हैं, उस दिन के अख़बार के मैट्रोपोलिटन शुमारे में पहले सफ़हे पर ये ख़बर छपवाई थी। जिसका खुलासा इस तरह से है:

आज़ाद कश्मीर का आख़री हिंदू हेड मास्टर अपने शागिर्दों से मिलने का मुतमन्नी (अज़: राजा असग़र)

इस्लामावाद, दिसंवर 18, आज़ाद कश्मीर का आख़री हिंदू हेडमास्टर जो अव आधी सदी से ज़्यादा अर्से से कश्मीर के हिंदुस्तान वाले हिस्से में रह रहा है, इस्लामावाद मंगलवार को आ रहा है। उसकी ख़्वाहिश है कि जो भी उसके पुराने तालिवे-इल्म इधर हों वो उससे मिलने की कोशिश करें। मास्टर चरणजीत लाल सहगल जो अब 81 साल का है। मुज़फ़्फ़रावाद में 1947 में जब लड़ाई भड़क उठी थी। जिससे तमाम हिंदू और सिख जो अब आज़ाद कश्मीर है वहां रह रहे थे वहां से भाग निकलने को मजबूर हुए थे, लेकिन मास्टर सहगल 1950 तक वहां ही रहा जवकि आख़िरकार उसको भी हिंदुस्तान हिजरत करनी पड़ी। मिस्टर सहगल ने लाहौर से सोमवार को 'डॉन' को बताया कि वो इस्लामावाद तीन दिन यानी वीरवार तक अपने एक दोस्त के घर (73, स्ट्रीट 24, सैक्टर एफ़ 10/1)में रुकेगा जहां पुराने तालिवे-इल्म मिल सकते हैं या फ़ोन पर राब्ता क़ायम कर सकते हैं। (फ़ोन नंबर 2102865)।

इस ख़बर ने मेरे लिए काफ़ी सहूलियत कर दी। 'डॉन' पाकिस्तान का मकबूलतरीन अख़बार है। इसको हर तब्क़े के लोग पढ़ते हैं, इसलिए मेरे सभी अज़ीज़ों और मेरे अहबाब को मेरे इस्लामाबाद आने की ख़बर हो गई चाहे वो पाकिस्तान के किसी भी

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हिस्से में रह रहे थे या वो कश्मीर के पाकिस्तान के ज़ेरे-कब्ज़ा हिस्से में रह रहे थे। मेरे अज़ीज़ों और अहबाब में तो बहुत से उजड़कर इस्लामाबाद में ही आ कर आरज़ी तौर पर रह रहे थे। बहुत थोड़े ही ऐसे थे जो मुज़फ़्फ़राबाद में ख़ेमा बस्तियों में या बचे-खुचे मकानों में रह रहे थे। वो सभी जो इस्लामाबाद में थे मुझे ज़ाती तौर पर मिलने आए थे, जो बाहर थे उन्होंने फ़ोन पर मुझसे राब्ता कायम किया था क्योंकि मैं इस्लामाबाद सिर्फ़ दो-ढाई दिन के लिए ही ठहरा था। इसलिए इस क़लील अर्से में उनका आना-जाना मुमकिन न था।

मुझे इस्लामाबाद एयरपोर्ट पर लेने के लिए मेरा हरदिलअज़ीज़ शागिर्द शेख़ बिशारत अहमद आया हुआ था। वो अपनी आज़ाद कश्मीर गवर्मेंट की सुप्रीम कोर्ट के चीफ़ जस्टिस के ओहदे से हाल ही में रिटायर हुआ था। उसको गवर्मेंट की जानिब से कुछ मराआत मिली हुई थीं जिनमें एक ड्राइवर भी मुहैया किया हुआ था। उसने अब कुछ ज़मीन ख़रीद कर इस्लामाबाद से बाहर मरी रोड से थोड़ा हट कर सुमली डैम रोड पर अपना मकान बनाया हुआ था जिसका नाम उसने कश्मीर हाउस रखा था। बिशारत की कच्ची-पक्की रेशे-मुबारक से उसका चेहरा पुरनूर दिखाई दे रहा था। वो मुझे एयरपोर्ट से सीधा अपने घर ले गया था। बिशारत को मैं मई 1950 से दिसंबर तक घर पर ही रियाज़ी की तालीम देता रहा था। उसके वालिद साहब जनाब अब्दुल हई जो तब जम्मू से हिजरत करके मुज़फ़्फ़राबाद आए थे वहां की हुकूमत के डिप्टी चीफ़ सेक्रेटरी थे। मेरे साथ उनके निहायत ही ख़ुशगवार, बराबरी के बिरादराना ताल्लुक़ात थे। वो मुझे अपने हकीकी छोटे भाई की मानिंद प्यार करते थे। वो अक्सर हर बात मुझसे खुल कर करते थे। वो निहायत ही बाअख़लाक़ इंसान थे जो किसी ज़ात-पात, रंग, नस्ल और किसी ऊंच-नीच को बिल्कुल नहीं मानते थे। उन्होंने बचपन से ही बिशारत को ज़बान, तारीख़, जुगराफ़िया और दीगर ऐसे मज़ामीन की घर पर ही तालीम दी थी ताकि वो स्कूलों के अच्छे-बुरे माहौल से दूर ही रहे। मुझे सिर्फ़ रियाज़ी की तालीम के लिए मामूर किया हुआ था। इसलिए मैं उसको घर पर ही पढ़ाता था। एयरपोर्ट के बाहर जब वो मेरे साथ बग़लगीर हुआ तो मुझे ऐसा महसूस हो रहा था कि मैं किसी बैरूनी मुल्क में नफ़रत और शुकूक से बनी हुई गहरी और अटल सरहद को पार करके नहीं आया बल्कि अपने ही घर एक बेटे के पास मिलने

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

के लिए आया हूं। घर पहुंच कर उसके बीवी-बच्चों ने जिस तरह गर्मजोशी से ख़ुशआमदीद किया उससे ऐसा लग रहा था कि मैं उनका निहायत ही करीबी बुज़ुर्ग अर्से बाद उनके पास मिलने के लिए आया हूं। मैं उनके लिए बिल्कुल अजनबी नहीं था, बल्कि अपना ही था जिससे मिलकर उनको निहायत ही मुसर्रत और शादमानी हुई थी। हमारे रिश्ते किसी नज़रिये के मौहताज नहीं हैं, बल्कि ये पाक और साफ़-सुथरे जज़्बात के रिश्ते हैं। ये इंसानी सांझी नस्ल, ज़बान और सिकाफ़त के रिश्ते हैं जिनको इन मुल्कों की बदगुमानियों और सियासी तकाज़ों से मिटाया नहीं जा सकता। मैंने बिशारत और उसकी बीवी के साथ बैठकर नाश्ता किया। अभी हम नाश्ता कर ही रहे थे कि मलिक मुज़फ़्फ़र और शेख़ अब्दुल कय्यूम आ गए।

मलिक मुज़फ़्फ़र ने आते ही रट लगा दी चलो घर चलें जिस पर बिशारत ने कहा कि ये भी इनका ही घर है, एक ही बात है, लेकिन मलिक साहब मुझे ले जाने के लिए बज़िद थे। वो सोच रहे थे कि मेरी और उनकी जान-पहचान बचपन की है और हम दोनों भाइयों की तरह आजतक रहे हैं और ये रिश्ता ज़्यादा नज़दीकी है। बहरहाल ये तय हुआ कि खाना जो तैयार था खा कर चलेंगे। इतनी देर में मेरे अज़ीज़ राजा मुहम्मद असग़र भी तशरीफ़ ले आए। वो अपने साथ कमीकोट के मक्की के आटे की रोटियां और साग लाए थे। हम सबने बड़े लुत्फ़ और प्यार से ये लज़ीज़ खाना खाया, और कुछ देर के लिए गपशप चलती रही। शाम को जब मैं रुख़्सत लेने के लिए अंदर बिशारत की बीवी के पास गया तो वहां उसकी बहू अपनी नौज़ाद बेटे के साथ बैठी थीं। तब मुझे मालूम हुआ कि बिशारत का पोता है। हस्बे-दस्तूर मैं उस नौज़ाद बच्चे को शगुन के तौर पर कुछ नकदी देने लगा तो बिशारत की बीवी ने मुझे सख़्ती से मना करते हुए कहा कि मेरी दुआ ही उनके लिए सब कुछ है। मैं हैरान हुआ कि बिशारत की बीवी उससे ज़्यादा परहेज़गार है। साथ में मेरे जाने पर कुछ रोनी सूरत बना कर इतना कहा कि उन्होंने महसूस किया था कि कुछ दिन उस्ताद मोहतरम उनके पास भी रहेंगे जिससे उनको ख़ुशी और राहत मिलेगी। बहरहाल फिर आने के लिए कह कर मुझे रुख़्सत किया। मैं और मलिक मुज़फ़्फ़र दोनों मुज़फ़्फ़राबाद में इकट्ठे ही रहते थे। उनका घर हमारे घर के बिल्कुल नज़दीक सामने ही था। गो हम एक दूसरे के घर पर रोज़ाना नहीं जाते थे लेकिन

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

स्कूल में हर रोज़ मिलते थे। हम कॉलेज में भी इकट्ठे ही पढ़ते रहे थे और तुर्रा ये कि हम दोनों होस्टल में इकट्ठे एक ही कमरे में रहते थे। फिर मुझे मुज़फ़्फ़र अगस्त 1948 में लाहौर में मिला था। तब हम काफ़ी अर्से के बाद मिले थे। इसके बाद वो कराची लॉ पढ़ने के लिए चला गया था और मैं 1950 दिसंबर माह में हिंदुस्तान हिजरत कर के आ गया था। मलिक मुज़फ़्फ़र और मेरा प्यार सगे भाइयों से भी कहीं ज़्यादा था। लेकिन ग़ैरकुदरती सरहद की लकीरों ने हमें जुदा कर दिया था। इस दौरान मुझे मलिक मुज़फ़्फ़र का तहरीरकर्दा एक मुख़्तसर लेकिन प्यार भरा पोस्टकार्ड मिला जिससे पुरानी यादें फिर ताज़ा हो गई लेकिन डाक के ज़रिये नामा-ओ-पयाम का सिलसिला जारी नहीं रखने की वजह से राब्ता कायम नहीं रह सका। इसलिए मैंने मुज़फ़्फ़र को एक इस्लामाबाद जाने वाले कश्मीरी दोस्त के हाथ मुख़्तसर सी चिट्ठी इरसाल की। उन्होंने वापस आकर मुझे मुज़फ़्फ़र की एक चिट्ठी दी बल्कि मेरा शुक्रिया अदा किया कि मेरी चिट्ठी की वजह से मुज़फ़्फ़र ने उनकी ख़ूब ख़ातिर-तवाज़ो की और मुझे इस्लामाबाद आने की ज़बानी भी दावत दी। चिट्ठी में मुज़फ़्फ़र ने अपने सब अहले-ख़ाना के बारे में तफ़्सील से आगाह किया था। बहरहाल ये सिलसिला फिर मुन्कता हो गया। नवंबर 1987 के शुरू में मुज़फ़्फ़र का फिर एक पोस्ट कार्ड दिल्ली से तहरीर किया हुआ मिला कि वो दिल्ली आया हुआ है लेकिन वो श्रीनगर जाने का वीज़ा हासिल करने की कोशिश कर रहा है और अगर उसको ये वीज़ा मिल जाता है तो वो जम्मू मेरे पास आकर कुछ दिन ठहरेगा। मैंने दिल्ली उन्हें टेलीफ़ोन किया जिस पर उनका कहना था कि अभी तक उनको ये वीज़ा नहीं मिला लेकिन कोशिश जारी है, लेकिन अब मुझे सब्र की ताब बिल्कुल नहीं रही और मैं दूसरे दिन ही सुबह दस बजे दिल्ली उनको मिलने के लिए पहुंच गया। हम बचपन के दोस्त जिनका प्यार भाइयों जैसा था लगभग चालीस साल बाद मिल सके और बड़े तपाक के साथ बग़लगीर हुए। उनकी बीवी से मेरी पहली मुलाकात होने के बावजूद सकीना भाभी बड़े तपाक और प्यार से मिलीं। हम तीनों दिन भर पुरानी यादें ताज़ा करते रहे और वक़्त का कुछ पता ही नहीं लग सका। हम अपनी पुरानी ज़िंदगी में मुतवातिर पच्चीस साल तक लगभग हर रोज़ एक दूसरे से मिला करते थे। इस दौरान सकीना भाभी ने मुझे बताया कि मेरे दोस्त कय्यूम भाई अक्सर मेरे मुताल्लिक अनोखी बातें

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

करके उन्हें हंसाया करते थे। वहरहाल मुझे वापस आना था और मुज़फ़्फ़र ने मुझे इस्लामावाद आने की पुरज़ोर दावत देते हुए रुख़सत किया।

मैंने और मेरी वीवी सावित्री ने मलिक मुज़फ़्फ़र की दावत कुवूल करते हुए **24** मार्च **1989** को दिल्ली से लाहौर वज़रिये हवाई जहाज़ पहुंच गए। वहां मुज़फ़्फ़र हमें लेने आया थ और उसके साथ हम वज़रिये ट्रेन इस्लामावाद चले गए। हमारा वीज़ा सिर्फ़ पंद्रह दिन का था जिसमें दो-तीन दिन एक जगह से दूसरी जगह जाने के सफ़र में सर्फ़ हुए। वाकी वारह दिनों में कोई एक-डेढ़ दिन लाहौर में घूमे, लगभग तीन दिन मुज़फ़्फ़रावाद रहे होंगे, वाक़ी सात-आठ दिन ही मुज़फ़्फ़र और सकीना भाभी के पास रह सके थे जो हम दोनों के लिए निहायत यादगार अर्सा था। अव जव मैं मुज़फ़्फ़र और कय्यूम के साथ मलिक मंज़िल आया तो सकीना भाभी ने वड़ी गर्मजोशी से मुझे ख़ुशआमदीद कहा। वो मुझे लगभग वीस साल वाद देख कर ख़ुशी से फूली नहीं समा रही थीं। मुझे सभी पोतों-पोतियों से मिलाया और ख़ूव गपशप की महफ़िल गर्म हो गई जो न मालूम कव तक चलती रहती कि इतने में मुझे मिलने के लिए चौधरी गुलाम नवी आ गए। चौधरी गुलाम नवी जो कि मुज़फ़्फ़रावाद के मश्हूरो-मारूफ़ चौधरी वली जू के फ़रज़न्द हैं, यहां इस्लामावाद में ही रह रहे हैं। वो यहां गवर्मेंट से ऑडिट और इन्कम टैक्स व्यूरो के चेयरमैन के ओहदे से रिटायर हुए हैं। उन्होंने मेरी आमद की ख़वर अख़वार 'डॉन' में पढ़ी और मुझसे मिलने के लिए चले आए। मैं उनसे पहले कभी नहीं मिला था लेकिन उनके वालिद चौधरी वली जू साहव से मेरी जान-पहचान अच्छी तरह से थी। वो वहुत ही नेकदिल और फ़रिश्ता सिफ़त, ख़ुदा दोस्त इंसान थे। मुज़फ़्फ़रावाद के हिंदू मुसलमान हर तव्के के लोग उनकी इज़्ज़त करते थे। **1947** के फ़सादात में उन्होंने अपनी जान की पर्वाह न करते हुए हिंदुओं की जान-माल की हिफ़ाज़त की थी। इसको कहते हैं ज़ादवूम की कशिश जो चौधरी गुलाम नवी को खींचकर मुझसे मिलने के लिए ले आई थी। हम वहुत देर तक वातें करते रहे जिसमें चौधरी कली जू की शख़्सियत मरकज़ी मौज़ू था। उनके आने से मुझे ऐसा लगा जैसे मुज़फ़्फ़रावाद मेरी ज़ादवूम की रूह मुझे मिलने आ गई हो।

शेख़ कय्यूम जो मेरे वहुत ही अज़ीज़ और ज़हीन शागिर्द हैं वो भी हमारे साथ ही वैठे रहे वल्कि जितना अर्सा मैं इस्लामावाद में रहा वो मेरे अंग-संग ही रहे। कय्यूम के

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वालिद डंगा सिंह स्पीडिंग कंपनी के जनरल मैनेजर थे। ये बहुत बड़ी जंगलात की कंपनी थी जिसके लकड़ी के डिपो मुज़फ़्फ़राबाद, कागान और बहुत सी दूसरी जगहों में भी थे। **1947** में पाकिस्तान बनने के बाद कय्यूम के वालिद साहब ने इस कंपनी की लकड़ी फ़रोख़्त करके उसकी रकम उसके मालिक सरदार डंगा सिंह को हिंदुस्तान भेजी थी। कय्यूम ऐसे ईमानदार बाप का फ़रज़न्द है। वो ख़ुद भी ईमानदार, मेहनती और नेक सीरत इंसान है। इस दौरान वो मुझे सबके मुताल्लिक हर तरह की जानकारी देता रहा। उसने मुझे ये भी बताया कि घोड़ी मुज़फ़्फ़राबाद के रहने वाले डॉ. गोपाल कृष्ण चड्ढा भी मुज़फ़्फ़राबाद आए थे और वहां लोगों ने उनकी बहुत ज़्यादा आवभगत की थी। डॉ. चड्ढा जवाहर लाल नेहरू यूनिवर्सिटी के वाइस चांसलर हैं। उन्होंने मुझे ये भी बताया कि मेरे एक और ज़हीन शागिर्द जो वहां चीफ़ कन्ज़र्वेटर फ़ॉरेस्ट के ओहदे से रिटायर हुए थे उनको प्रॉस्टेट का कैंसर हो गया था, इसलिए वो इलाज कराने के लिए अपने बेटे के पास अमरीका चले गए थे और उसके बाद लौटकर नहीं आए। उन्होंने और भी मेरे शागिर्दों के मुताल्लिक जानकारी दी। उनका कहना था कि मेरा शागिर्द अब्दुर्रहमान एम. एल. ए जो मुझसे मिलने की कवी ख़्वाहिश रखता था उस ज़लज़ले में फ़ौत हो गया था।

इतने में मुज़फ़्फ़र का छोटा बेटा आमिर भी आ गया। वो हबीब बैंक में काम करता है। बैंक के काम-काज के औकात काफ़ी लंबे होते हैं। वो सुबह नौ बजे तक बैंक चला जाता था। उसकी बीवी भी किसी स्कूल में पढ़ाती है और वो भी उसके साथ ही चली जाती थी। आमिर शाम को सात बजे तक ही घर आता था और दिन भर की थकावट की वजह से सीधा अपने कमरे में आराम करने के लिए चला जाता था। वो बहुत ही कमगो है। लेकिन उस दिन मेरे साथ तपाक से मिलने के बाद वो मेरे पास ही बैठ गया और इधर-उधर की बातें होती रहीं। वो भी मुज़फ़्फ़र की तरह अपने उसूलों का पाबंद है और बुजुर्गों की ख़िदमत करना अपना फ़र्ज़ समझता है। जितने दिन मैं वहां रहा वो हर सुबह छह बजे तक मेरे गुस्ल के लिए गर्म पानी तैयार करके देता था। मुज़फ़्फ़र का सिवाय टीवी देखने और अख़बार पढ़ने के कोई दूसरा शगल नहीं रह गया था। वो रात को ग्यारह-बारह बजे तक टीवी देखते रहते थे, इसलिए सुबह भी देर से उठ पाते थे। उनकी याददाश्त भी कुछ कमज़ोर हो गई थी लेकिन सेहत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

बिल्कुल ठीक थी। उनके सब दांत असली थे और देखने और पढ़ने के लिए चश्मे का भी इस्तेमाल नहीं करते थे। घर की सब देखभाल सकीना भाभी ही करती थीं या उनकी बड़ी बहू आयशा कुछ उनका हाथ बटाती थी। मुज़फ़्फ़र का लड़का अतहर पी आई. ए में इंजीनियर है। उसकी ड्यूटी उस वक़्त कराची थी। वो अपनी नौकरी के सिलसिले में बैरून ममालिक भी जाता रहता है। मुज़फ़्फ़र के दो लड़के और एक लड़की फ़ौज़िया हैं। फ़ौज़िया बहुत ही होनहार लड़की है। उसकी शादी कराची के एक इंजीनियर नौजवान से हुई है जो कराची में ही रहता है और वहीं नौकरी करता है। मेरे दामाद डॉ. क्लेर जब कभी कराची काम से जाते हैं, तो वो फ़ौज़िया से ज़रूर मिलकर आते हैं। फ़ौज़िया मुझे और डॉ. क्लेर को मिलने इस्लामाबाद आना चाहती थी लेकिन उस वक़्त उसके शौहर का तबादला किसी बाहर के मुल्क में हो रहा था जिसकी वजह से वो नहीं आ सकी। उसने फ़ोन करके अपनी मजबूरी ज़ाहिर की थी।

मुझे मुज़फ़्फ़र ने अपने सभी बच्चों की शादी में शामिल होने की दावत दी थी लेकिन पासपोर्ट और वीज़ा के चक्करों में मैं किसी भी शादी में शामिल नहीं हो सका। ये मेरी मजबूरी थी जिसका मुझे बहुत दुख है। मेरे निहायत दिलचस्प दोस्त क़य्यूम लाला काफ़ी अर्से पहले फ़ौत हो चुके थे। उनकी बीबी सकीना बहन जो मुज़फ़्फ़र की सगी बहन हैं काफ़ी बीमार हैं और फ़िलहाल मुज़फ़्फ़राबाद में अपने बड़े लड़के ताहिर क़य्यूम के साथ रह रही हैं जो मुज़फ़्फ़राबाद डिवीज़न का डी. आई. जी. पुलिस है। उसको मुज़फ़्फ़राबाद में सरकारी मकान मिला हुआ है। मुझे ताहिर क़य्यूम ने मुज़फ़्फ़राबाद से दो बार फ़ोन किया था। उसने बताया था कि उसकी मां सकीना बहन काफ़ी अलील हैं। वो हर वक़्त सोई रहती हैं और उनकी दिमाग़ी हालत इतनी ख़राब हो गई है कि वो किसी को भी नहीं पहचान पाती हैं। मुझे ये सब जानकर बहुत दुख हुआ। सकीना बहन बहुत ही मिलनसार और प्यार करने वाली ख़ातून हैं। मैं उनको देखने के लिए जाना चाहता था। लेकिन एक तो वीज़ा की मजबूरी थी, दूसरे उस वक़्त बर्फ़ बारी की वजह से रास्ते भी ख़राब थे। मुझे मुज़फ़्फ़राबाद आने की ताहिर क़य्यूम ने भी दावत दी थी बल्कि यहां तक कहा था कि वो ख़ुद इस्लामाबाद आकर मुझे अपने साथ ले जाएगा।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

दूसरे दिन 20 दिसंबर को हम सबको नाश्ता करने के लिए राजा मुहम्मद असग़र के यहां जाना था। इसलिए नहा-धोकर तैयार होकर मैं, मुज़फ़्फ़र और क़य्यूम सुबह दस बजे असग़र के घर चले गए। उनका घर मुज़फ़्फ़र के घर के बिल्कुल पास ही था। कुछ देर बाद बिशारत भी आ गया। वहां काफ़ी गर्मागरम बहस और हिंदुस्तान-पाकिस्तान के ताल्लुकात, कश्मीर के मसले, जनरल मुशर्रफ़ साहब की हरदिलअज़ीज़ी वग़ैरा वग़ैरा मौज़ूआत पर लंबी-चौड़ी बातचीत होती रही। इस दौरान असग़र साहब के कुछ दीगर सहाफ़ी अहबाब भी आ गए। फिर तो इस बहस-मुबाहिसे को और भी तक़वियत मिल गई। उन्होंने एक फ़ोटोग्राफ़र को भी मदऊ किया हुआ था। दरअसल असग़र मेरा इंटरव्यू अख़बार 'डॉन' के लिए लेना चाहते थे। सब की राय से उन्होंने मेरा इंटरव्यू लेने के लिए टेप रिकॉर्डर ऑन किया और सवालात पूछने शुरू किए। ये इंटरव्यू 'डॉन' के 21 दिसंबर के मैट्रोपोलिटन शुमारे में शाया हुआ था, जिसका ख़ुलासा कुछ इस तरह से है:

कश्मीर में सिर्फ़ मुहब्बत से ही तल्ख़ी को ख़त्म किया जा सकता है

एक उस्ताद का इरशाद (राजा असग़र)

इस्लामाबाद, 20 दिसंबर / 81-साला मास्टर चरणजीत लाल को ये शर्फ़ हासिल है कि वो पाकिस्तान के ज़ेरे-कब्ज़ा कश्मीर के एक सरकारी स्कूल के आख़री हिंदू हेड मास्टर रह चुके हैं। 1948 में जब कश्मीर पर भारत और पाकिस्तान के दरम्यान पहली जंग हुई, तो उस वक़्त मास्टर चरणजीत लाल मुज़फ़्फ़राबाद के एक स्कूल में हेड मास्टर थे। मास्टर जी 1950 तक और लोगों के साथ मुज़फ़्फ़राबाद में ही रहे। मास्टर चरणजीत लाल सहगल उस वक़्त भारत और पाकिस्तान में लगी फ़िरक़ेवाराना फ़सादात की आग के दौरान अपनी वालिदा के मुज़फ़्फ़राबाद के एक दरिया में छलांग लगा कर ग़र्क़ाबा होने का अलमिया अब भूल चुके हैं। उनका कहना है, ''बुरी और तल्ख़ यादों को भूल जाओ और सिर्फ़ अच्छी बातों को याद करो। ये नफ़रत ही थी जिसने दोनों मुल्कों को अलग किया और ये नफ़रत ही थी जिसने जम्मू कश्मीर के भी दो हिस्से किए। लेकिन मुहब्बत के बीज सरहद के दोनों तरफ़ बोए गए हैं और एक वक़्त आएगा जब ये बीज एक बड़े और मज़बूत पेड़ को जन्म देगा। जिसमें मुहब्बत

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

और भाईचारे के फल आएंगे। क्योंकि मुहब्बत ही अब दोनों मुल्कों के दरम्यान बरसों से चली आ रही तल्ख़ी को ख़त्म कर सकती है।

मुज़फ़्फ़राबाद से हिजरत करने के बाद मास्टरजी ने यहां ख़ुद को कश्मीर के वाक़ेआत और हालात के बारे में लिखने और समाजी काम करने में मसरूफ़ रखा। उनका कहना है कि श्रीनगर और मुज़फ़्फ़राबाद के दरम्यान बस सर्विस शुरू होने से दोनों तरफ़ के अवाम के दिलों में इकट्ठा होने के जज़्बे ने सर उभारना शुरू कर दिया है लेकिन इसमें कुछ मफ़ादपरस्त अनासिर रुकावटें खड़ी कर रहे हैं। 1975 के एक वाक़ए को याद करते हुए उन्होंने कहा कि जब ये ख़बर आई कि पाकिस्तान का एक जहाज़ हादसे का शिकार हुआ है और उसका पायलट मुहम्मद हनीफ़ हलाक हो गया है तो उस वक़्त मुझे लगा कि मेरा भाई हलाक हो गया है क्योंकि हनीफ़ उनका हमजमात रह चुका था। अपने पाकिस्तान के दौरे को याद करते हुए मास्टर जी ने अपने साबिक़ शागिर्द मक़बूज़ा कश्मीर के सुप्रीम कोर्ट के साबिक चीफ़ जस्टिस बिशारत अहमद शेख़ और एक और साबिक़ हमजमात और सरकारी अफ़सर मुज़फ़्फ़रुद्दीन मलिक की मेज़बानी का तज़किरा किया और कहा कि इन लोगों ने उन्हें जो प्यार दिया है उसे वो कभी नहीं भुला पाएंगे।

"क्या किसी ने कभी सोचा था कि बर्लिन की दीवार गिराई जाएगी? लेकिन ऐसा हुआ," मास्टर जी ने लाइन ऑफ़ कंट्रोल का ज़िक्र करते हुए कहा। "ऐसा यहां भी हो सकता है लेकिन इतनी जल्दी नहीं होगा क्योंकि दोनों मुल्कों ने अपने-अपने हिस्सों में काफ़ी सरमायाकारी की है।" जब उनसे पूछा गया कि क्या मौक़ा दिया जाने पर सरहद के आर-पार कश्मीरी इकट्ठे रहना पसंद करेंगे, तो उन्होंने जवाब दिया कि आम लोग तो चाहते हैं मगर उनके बारे में कुछ नहीं कहा जा सकता जो इक़्तेदार में हैं। उन्होंने उम्मीद ज़ाहिर की कि एक दिन ऐसा ज़रूर आएगा जब दोनों मुल्क दोस्त बन जाएंगे। "आख़िर कब तक लड़ते रहेंगे। किसी दिन तो उनके दिल साफ़ होंगे। किसी दिन ये नफ़रत मुहब्बत में बदल जाएगी और दिलों की दूरियां भी ख़ुद-बख़ुद मिट जाएंगी। और वो दिन ज़रूर आएगा।"

मैं और बिशारत काफ़ी देर तक असग़र के घर बैठे रहे लेकिन मुज़फ़्फ़र और क़य्यूम वापस आ गए। इतने में असग़र के बड़े भाई भी अपने गांव डनाकचेली से आ

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

गए। उन्होंने भी वहां के हालात हमें तफ़्सील से सुनाए। कोई तीन-चार बजे के करीब ही हम मलिक मंज़िल वापस आ सके। इतनी देर में ख़ालिद मुज़फ़्फ़र जो कि पाकिस्तान के ज़ेरे-कब्ज़ा कश्मीर रेडियो के डायरेक्टर थे और मेरे शागिर्द थे तशरीफ़ ले आए। वो अब कुछ अलील थे। उनको गठिया की तकलीफ़ थी, इसलिए लाठी के सहारे से चल रहे थे। वो अब मुज़फ़्फ़राबाद से उजड़ कर चकलाला से भी आगे कहीं रह रहे थे और तक़रीबन पचास किलोमीटर की मुसाफ़त तय करके मुझसे मिलने आए थे। फिर शाम तक उनसे बातचीत होती रही। शाम को बिशारत, कय्यूम और उनकी बेटी आयशा मेरे साथ घूमने और कुछ ख़रीदारी करने चले गए।

वापस आने के थोड़ी देर बाद ही कराची से अब्दुल अज़ीज़ कुरैशी साहब का फ़ोन मौसूल हुआ। मुझे तो उनके मुताल्लिक़ कुछ याद नहीं था। उनके बेटे वजाहत कुरैशी ने मेरी आमद के मुताल्लिक़ 'डॉन' अख़बार में पढ़ा था और उसने अपने बाप से ज़िक्र किया होगा। इस पर मुझसे फ़ोन पर अब्दुल अज़ीज़ साहब ने राब्ता क़ायम किया था। उनका कहना था कि मैं कॉलेज में भी उनके साथ पढ़ता था और जब मैं मुज़फ़्फ़राबाद हाई स्कूल में हेड मास्टर था तब भी वो वहीं थे। बाद में वो मीरपुर मुलाज़मत के सिलसिले में चले गए थे। बहरहाल वो बहुत देर तक मुझसे फ़ोन पर बातचीत करते रहे, जो कोई आधा घंटा जारी रही। कुरैशी साहब ने अपने मुताल्लिक़ सब कुछ बताया और मेरी दास्तान भी सुनी। उन्होंने मुझे कराची आने की दावत भी दी। उनके बेटे ने भी मुझसे बात कर के उनके पास आने की दरख़्वास्त की। मुझे मुज़फ़्फ़र ने भी बताया कि कुरैशी साहब को वो अच्छी तरह जानते हैं और वो हमारे साथ ही कॉलेज में एक क्लास पीछे थे। और वो मीरपुर ट्रेनिंग कॉलेज में प्रोफ़ेसर रहे थे। बाद में रिटायर होने के बाद मुज़फ़्फ़राबाद में ही रह रहे थे। अब शायद मुज़फ़्फ़राबाद में ज़लज़ला आने के बाद हिजरत करके अपने बेटे के पास चले गए होंगे।

अब मुझे इस्लामाबाद में सिर्फ़ एक दिन यानी 21 दिसंबर को ही रहना था और 22 दिसंबर सुबह नौ बजे की फ़्लाइट से वापस जाना था। चुनांचे उस दिन मुझे मेरे बहुत से अज़ीज़ जो इस्लामाबाद में थे मिलने आए। जो मुज़फ़्फ़राबाद या किसी दूसरी जगह थे उन्होंने टेलीफ़ोन पर मुझसे बात की। इस दौरान जो भी तीन दिन में

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

इस्लामावाद में रहा शेख़ विशारत अहमद और शेख़ अब्दुल कय्यूम सारा दिन मेरे साथ ही रहे। विशारत तो छोटे वच्चों की तरह हर वात की मुझसे खोज-ख़वर लेता रहा। यहां तक कि मुझसे पूछने लगा कि मैं अंडा-गोश्त और लहसुन-प्याज़ क्यों नहीं खाता, ऐसी वंदिश किस मज़हव में है। जिस पर मेरा कहना था कि ये सव चीज़ें तामसिक हैं इसलिए इनसे परहेज़ करना ठीक रहता है। वाकी मेरा मज़हव वही है जो हज़रत मंसूर का था या वुल्ले शाह का था या कवीर का था जिनका मानना था कि सभी ख़ुदा का नूर हैं और सभी आपस में भाई हैं। उनका ख़ुदा न मस्जिद में है न मंदिर में वल्कि उनके अंदर है। हमारे मज़हव कुछ भी क्यों न हों धर्म तो सव का एक ही है कि हम ख़ुदाई नूर का जुज़्व हैं और इस नूर में मिल जाना हमारा मकसद है। विशारत तो पक्का पांच वक़्त का नमाज़ी है, सच्चाई और रास्ती का पैरोकार भी।

दोपहर को मुझे आमना वेटी मिलने आई थी। वो कय्यूम की वड़ी लड़की है और वचपन से ही उसकी वीनाई ज़ाया हो गई है। उसको वचपन में दिमाग़ी वुख़ार हो गया था जिससे उसकी वीनाई ज़ाया हो गई थी। वहुत इलाज करवाने पर भी ये वहाल नहीं हो सकी। अव वो कुरान शरीफ़ की हाफ़िज़ है। उसने मुकम्मल कुरान शरीफ़ वमय तर्जुमे के हिफ़्ज़ किया हुआ है। उसने मुझे कुरान शरीफ़ की वहुत सी आयात सुनाई थीं। उसकी आवाज़ इतनी सुरीली और मीठी थी जैसे घंटियां वज रही हों। वो विल्कुल भोली-भाली फ़रिश्ता सीरत वच्ची है। उसका मासूम चेहरा फ़रिश्ता सूरत दिखाई देता था। उसको चलने या दीगर काम करने में कोई दिक़्कत नहीं होती थी। वो वड़ी आसानी से टेलीफ़ोन के नंवर घुमा लेती थी। मेरे साथ वो वहुत देर तक मीठी-मीठी वातें करती रही। उसकी शादी भी नहीं हो सकी है लेकिन उसको किसी चीज़ का रत्ती भर मलाल नहीं है। ख़ुदावंदे-करीम ने उसकी वीनाई तो उससे छीन ली है लेकिन उसके वदले उसको वहुत सी ख़ूवियों से नवाज़ा है जिनमें उसको सव्र और कनाअत की सवसे वड़ी दौलत अता की हुई है।

शाम को मुझे मिलने मेरे अज़ीज़ प्रोफ़ेसर शफ़ीकुर्रहमान कश्मीरी आए। उनके साथ उनकी मंझली वेटी आसमां और सवसे छोटी वेटी भी थी। उनकी वीवी 8 अक्तूवर के ज़लज़ले में फ़ौत हो गई थीं। वो ख़ुद और उनकी वेटी अस्मा वुरी तरह से और शदीद तौर पर ज़ख़्मी हुए थे और काफ़ी अर्से अस्पताल में ज़ेरे-इलाज रहे थे।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

वो अभी भी मुकम्मल तौर पर सेहतयाव नहीं हो पाए थे। उनकी टांगों पर टांके लगे दिखाई दे रहे थे और लाठी के सहारे के बग़ैर आसानी से चल नहीं सकते थे। जब ज़लज़ला आया तो वो घर पर ही थे और यूनिवर्सिटी जाने की तैयारी कर रहे थे। इसलिए यूनिवर्सिटी के कैंपस की वर्बादी की चश्मदीद जानकारी उनको नहीं के बराबर थी। उनको घर से ही ज़ख़्मी हालत में अस्पताल लाया गया था। उनकी जानकारी के मुताबिक यूनिवर्सिटी कैंपस में कोई दो सौ पिछत्तर जानें तल्बा और उस्तादों की तल्फ़ हुई होंगी। नीज़ यूनिवर्सिटी कैंपस को आरज़ी तौर पर इस्लामाबाद में मन्तकिल किया हुआ था। लेकिन मुज़फ़्फ़राबाद में यूनिवर्सिटी का मुख़्तसर सा कैंपस बन कर तैयार हो गया था जिसमें इस्लामाबाद के आरज़ी कैंपस से उसको चंद माह में मुंतकिल किया जाना था। बहरहाल शफ़ीक साहब की निजी ज़िंदगी में काफ़ी मुश्किलात पैदा हो चुकी थीं। उनकी सेहत भी बिल्कुल अच्छी नहीं थी, और उस पर घर में तीन लड़कियों की देखभाल करने की ज़िम्मेदारी, जबकि ख़ातूने-ख़ाना फ़ौत हो चुकी हो। मैं काफ़ी देर तक उनके साथ बातचीत करता रहा।

उनका मुझसे रुख़्सत होने को बिल्कुल जी नहीं कर रहा था। वो अभी बैठे ही थे और बातचीत जारी थी कि मुज़फ़्फ़र के छोटे भाई कर्नल मसूद और कय्यूम लाला के छोटे भाई मुहम्मद हफ़ीज़ भी आ गए। कर्नल मसूद पहले मुज़फ़्फ़राबाद सिविल और मिलिट्री अस्पताल के इन्चार्ज थे लेकिन अब उन्होंने अस्पताल की नौकरी छोड़ दी थी और यहां इस्लामाबाद में पब्लिक सर्विस कमीशन के चेयरमैन बनाए गए थे। मुहम्मद हफ़ीज़ साहब पहले डी.सी. कोटली थे लेकिन अब वो सर्विस से रिटायर हो चुके थे, नीज़ ज़लज़ला आने के बाद मुज़फ़्फ़राबाद से हिजरत कर के यहीं इस्लामाबाद में रिहाइश रखी हुई थी। इन सबके एक साथ इकट्ठा होने से महफ़िल काफ़ी दिलचस्प हो गई थी। ये महफ़िल अभी गर्म ही थी कि डॉक्टर क्लेर और रवि बाबा मिस्टर हारून के साथ पंजा साहब की ज़ियारत कर के वापस तशरीफ़ ले आए। शेख़ कय्यूम भी हमारे साथ बैठे हुए थे। उन्होंने अपनी जानकारी बतौर डायरेक्टर जनरल टूरिज़्म सबको देनी शुरू कर दी, और कय्यूम जब किसी मौज़ू पर बोलना शुरू कर दें तो वो ख़त्म ही नहीं होता है। लेकिन डॉक्टर क्लेर और रवि बाबा दिन भर के थके हुए थे, इसलिए वो मुज़फ़्फ़र और बाकी सब अस्हाब से रुख़्सत ले कर अपने होटल के लिए

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

रवाना हो गए। उसके वाद वड़ी वेदिली के साथ शफ़ीक साहव ने भी रोनी सूरत वना कर जाने के लिए रुख़्सत ली। मैं उनको वाहर कार तक छोड़ने के लिए गया और उनकी जल्द से जल्द सेहतयावी की साथ उनको उनकी बेटियों के साथ रुख़्सत किया। इसके वाद मुहम्मद हफ़ीज़ और कर्नल मसूद भी खाना खाने के वाद रवाना हो गए। इस दौरान मुझे मुज़फ़्फ़रावाद से मुहम्मद शफ़ीक, मुहम्मद मतीन और अब्दुल रशीद के जो कि मेरे शागिर्द हैं फ़ोन मौसूल हुए। ये तीनों अपना-अपना कारोबार कर रहे थे जो ज़लज़ले की वजह से तवाहो-वर्वाद हो कर रह गया था। अब वो नए सिरे से अपने-अपने कारोवार को चला रहे थे। मैंने उनको अपनी नेक ख़्वाहिशात और उनके कारोवार में कामयाव होने के लिए दुआ दी। उनकी मुझसे मिलने की कवी ख़्वाहिशें थीं। लेकिन मुझे दूसरे दिन वापस जाना था। इसलिए ये मुमकिन न था। इस सफ़र में वहुत से अज़ीज़ों और अहवाव से मिल भी सका लेकिन फिर भी कुछ दीगर को मिलने की हसरत रह ही गई जिनमें राजा मुहम्मद असलम को मिलने की ख़्वाहिश वहुत ज़्यादा थी लेकिन उससे कोई राव्ता ही नहीं हो सका। मुहम्मद असलम के वालिद राजा इस्माईल ख़ां मेरे साथ एक सगे भाई की तरह सुलूक करते थे जव मैं अंवोर कैंप में रह रहा था।

मैं 1989 में जव मुज़फ़्फ़रावाद गया था तव भी अपने भाई जैसे दोस्त राजा इस्माईल ख़ां को नहीं मिल सकता था क्योंकि मैं वहां सिर्फ़ तीन दिन ही ठहर सका था। अब वो दुनिया में नहीं हैं, इसका मुझे अज़ हद अफ़सोस है। मेरे प्यारे शागिर्द जस्टिस शेख़ बिशारत अहमनद ने जो मेरे बेटे की मानिंद हैं, रिटायर होने के वाद मुझे जम्मू मिलने आने के लिए कारवाने-अमन में सफ़र करने की इजाज़त मांगी थी जो उसको नहीं मिल सकी थी। ख़ैर इस बार मैं जितने ढाई-तीन दिन इस्लामाबाद रहा वो सारा वक़्त मेरे अंग-संग ही रहा हालांकि उसके अपने हकीकी भाई इस दौरान वैरूने-मुल्क से इस्लामावाद आए हुए थे। ये विशारत का वड़प्पन है कि उसने सोशल रिश्ते को हकीकी पर तरजीह दी।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

10
वापसी

मुझे 22 दिसंवर सुवह नौ वजे की फ़्लाइट से इस्लामावाद से लाहौर के लिए रवाना होना था जवकि डॉक्टर क्लेर और रवि वावा को वज़रिये कार इस्लामावाद से लाहौर पहुंचना था। वहां से हम तीनों को आगे वाहगा के रास्ते से अमृतसर उसी दिन पहुंच कर रात नौ वजे गोल्डन टैंपल एक्सप्रेस से दिल्ली के लिए रवाना होना था। मैं सुवह-सवेरें ही रवाना होने के लिए तैयार हो गया। आमिर मुझे एयरपोर्ट तक छोड़ने आया था। सकीना भाभी और मुज़फ़्फ़र से रुख़्सत होते वक़्त उनका कहना था कि मैं दोबारा सावित्री को साथ ले कर ज़्यादा दिनों के लिए आऊं। मलिक मंज़िल से एयरपोर्ट तीस किलोमीटर से ज़्यादा ही होगा। एयरपोर्ट पर जिस हवाई जहाज़ पर मुझे सफ़र करना था वो विल्कुल छोटा हवाई जहाज़ था जिस पर वादी ज़ियारत लिखा हुआ था जो शायद वादी ज़ियारत जाने के लिए महफ़ूज़ होगा। ये वादी कोयटा से 133 किलोमीटर की दूरी पर वलूचिस्तान सूवे में 2449 मीटर की ऊंचाई पर एक सेहत-अफ़ज़ा और सयाहती मुक़ाम है। यहां इसके गिर्दो-पेश में निहायत ही क़दीम ज़माने से एक किस्म की सनोवरी सदावहार झाड़ियां कसरत से पाई जाती हैं। इनमें कुछ तो पांच हज़ार साल पुरानी हैं। ज़ियारत से मुराद मक़वरा या मज़ार है। एक मुक़ामी वलीउल्लाह खरवादी वावा का ज़ियारत के क़स्वे से दस किलोमीटर की दूर पर मज़ार है जिसकी ज़ियारत के लिए अक़ीदतमंद वड़ी तादाद में हाज़री देने आते रहते हैं।

मैं ग्यारह वजे के करीव लाहौर एयरपोर्ट पहुंच गया था। वहां मुझे हक़ साहव का भान्जा लेने आया था। मैं उसके साथ डॉक्टर डार साहव के घर गया, और वहां खाना खा कर डॉक्टर डार साहव के अस्पताल गया। वहां डॉक्टर क्लेर और रवि वावा मेरा इंतज़ार कर रहे थे और वहां से हम वाहगा के लिए रवाना हो गए, जहां से

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

हम दूसरी कार में अमृतसर के लिए रवाना हो गए। अमृतसर कुछ देर के लिए खाना खाने के लिए रुकने के बाद हम रेलवे स्टेशन चल दिए। वहां हम गोल्डन टैंपल एक्सप्रेस गाड़ी में सवार हो कर दिल्ली के लिए रवाना हो गए। मैं और डॉक्टर क्लेर एक केबिन में थे और रवि बावा को साथ वाले केबिन में बर्थ मिला था।

मेरे लिए नीचे का बर्थ था और डॉक्टर क्लेर ऊपर के बर्थ पर सो गए। मैं नीचे के बर्थ पर आराम से लेट कर सोचने लगा कि मेरा इस्लामाबाद जाना और इस उजलत में वापस आना एक खुली आंखों से देखा हुआ ख़्वाब जान पड़ता है। मैं भी कितना ख़ुशनसीब हूं, या बदनसीब, जिसके अज़ीज़ो-अहबाब दो हिस्सों में बंटे हुए हैं, जिनको हमारे दरम्यान एक ख़ूनी लकीर ने एक-दूसरे से हमेशा-हमेशा के लिए जुदा कर दिया है और हमारा दरम्यानी फ़ासला सरहद की इन अटल लकीरों से दराज़ ही होता जा रहा है। हम अपनों से परदेसी होकर हमेशा के लिए बिछड़ गए हैं और कभी मिलना नसीब होता है तो वो भी बहुत मुद्दत के बाद सिर्फ़ चंद दिनों के लिए।

मैं अपने मां-बाप की वाहिद औलाद हूं। मैं अभी चार साल का ही था कि मेरे बाप का साया मेरे सर से उठ गया था और मुज़फ़्फ़राबाद में अपनी मां की ख़ौफ़नाक मौत भी देख चुका हूं। लेकिन फिर वहीं अपने दोस्त मुहम्मद हुसैन की मां बीबी साहिबा से बिल्कुल मां जैसा प्यार और ख़ुलूस पाया। मुझे वहां तब ऐसा लगता था जैसे वो मेरी हकीकी मां हैं। वो भी मुझे मेरी मां की तरह चरन ही कह कर पुकारती थीं। मैंने अपनी ज़िंदगी के पच्चीस साल मुज़फ़्फ़राबाद में गुज़ारे हैं। वहां स्कूल में मैं पढ़ाई में काफ़ी होशियार था। इसलिए मेरे बहुत से दोस्त थे जिनके प्यार की वजह से मैंने कभी अकेलापन महसूस ही नहीं किया। मेरे ज़्यादातर दोस्त मुसलमान थे। कुछ हिंदू भी थे जो **1947** के बटवारे के बाद बिछड़ गए और मुझे तीन साल तक मुज़फ़्फ़राबाद में ही रहना पड़ा जहां मेरे कोई एक-दो दोस्त मिलते थे जिनमें मुज़फ़्फ़र और कय्यूम लाला काबिले-ज़िक्र हैं। मुज़फ़्फ़र तो कॉलेज में भी मेरे साथ पढ़ता रहा और हम दोनों मुहम्मद हनीफ़ के साथ एक ही कमरे में रहते थे। हम तीनों के ख़्यालात जुदा थे लेकिन हमारा प्यार सगे भाइयों जैसा था।

1948 में जब मैं हाई स्कूल में हेड मास्टर था तब मेरे दसवीं जमात के शागिर्द भी मुझसे ज़्यादा से ज़्यादा सात-आठ साल ही छोटे थे। वो मुझे अपने बड़े भाई की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मानिंद प्यार और इज़्ज़त देते थे। उस वक़्त मेरी वहां की ज़िंदगी बिल्कुल बेमक़सद और एकदम वीरान थी लेकिन उनके प्यार और एहतेराम की वजह से मैंने अपने आप को कभी अकेला महसूस नहीं किया। मेरे शागिर्द मेरी दिलजूई के लिए हमेशा पेश-पेश रहते थे और मुझे अकेले बैठे हुए उदासी की हालत में देखते थे तो मेरे पास आ कर बड़े एहतेराम से और प्यार से इधर-उधर की मीठी-मीठी बातें करते थे, कभी-कभी मुझे चुटकुले भी सुनाते थे।

जब मैं मार्च 1989 में मुज़फ़्फ़राबाद गया था तो अपने शागिर्दों से मिलकर मुझे ऐसा महसूस होता था कि वो मेरे शागिर्द नहीं, बल्कि मेरे अज़ीज़ बच्चे हैं जिनको मैं चालीस साल के बाद नहीं मिल रहा बल्कि ये हमेशा मेरे साथ थे। मेरी बीबी सावित्री का कहना था कि मेरे शागिर्दों के प्यार, ख़ुलूस और उनके दिलों में इस क़दर इज़्ज़त और एहतेराम को देख कर ऐसा लग रहा था कि कहीं मैं उन्हीं के पास न रुक जाऊं।

1950 में हिंदुस्तान आने के बाद मैं दो-ढाई साल बिल्कुल ख़ानाबदोशी की हालत में रहा। मेरे पास दो जोड़े कपड़े और एक कंबल कुल असासा था। सोशल वर्कर की हैसियत से जो ऑनरेरियम मिलता था उसमें कुछ ख़ुर्दो-नौश पर सर्फ़ करता था, बाक़ी बांट देता था। हत्ता कि मेरी मुलाक़ात एक दोशीज़ा से हुई और वो मुझे अच्छी लगने लगी। मैं गैरइरादी तौर पर उसकी तरफ़ खिंचता चला गया। शायद मुझे उससे मुहब्बत हो गई थी जो अंदर ही अंदर सुलगती रही। लेकिन इज़हार करने की हिम्मत नहीं हो रही थी। हम एक-दूसरे से मिलते थे, बातें करते थे। चाहत बढ़ती रही। ये क्यों हो रहा था और कैसे हो रहा था ये हमारी समझ से बाहर था। इसको किस अंजाम पर लाना है हम कभी सोच ही नहीं पाए थे। हम दोनों की जान-पहचान वाले एक डॉक्टर साहब थे। एक दिन उस दोशीज़ा ने कहा कि डॉक्टर साहब जानना चाहते हैं कि मुझे उनकी साली साहिबा के साथ शादी मंज़ूर होगी या नहीं। इसके जवाब में मेरे मुंह से अचानक बग़ैर किसी सोच-समझ और इरादे के ये फ़िक़रा निकल गया कि आपका ऐसा करने का क्या इरादा है। शायद ये पहली बार कुछ इज़हारे-मुहब्बत था या आरज़ू की गुज़ारिश। जिसका जवाब ख़ामोशी के सिवा कुछ न मिला। मैंने सोचा ख़ामोशी नीम रज़ा ही होती है।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

ये मेरी उस वक़्त की वीरान ज़िंदगी का एक अहम वाक़ेआ था। लेकिन ये काम इतना आसान न था। वो दोशीज़ा तो निहायत ही ऊंची ज़ात से ताल्लुक़ रखती थीं जबकि मैं नीची ज़ात का हूं। न मैं ज़ात-पात को कभी समझ सका हूं और न ही कभी इसको माना है। काफ़ी हंगामा हुआ क्योंकि ये शादी शास्त्रों के मुताबिक़ हो ही नहीं सकती थी। मैं कुछ कमज़ोर इरादे का इंसान हूं इसलिए ख़ामोश हो गया था। लेकिन वो दोशीज़ा मज़बूत इरादे की मालिक है। उसके अज़्म से मुझे भी सहारा मिला और उसकी इस अटल हट से हम शादी के पवित्र बंधन में बंध ही गए। उस नेक ख़ातून के ज़ात-पात के बंधन तोड़ कर मेरी रफ़ीक़ा-ए-हयात बनने से मेरी ज़िंदगी का धारा ही बदल गया। मैं अपने वतन से उजड़ा हुआ इंसान फिर से इस मुल्क में बस गया। मेरी बड़ी लड़की नीलम को उसकी मौसियां और मामियां अक्सर चिढ़ाती थीं कि नीलम तू ब्राह्मण होकर भी खत्री है। वो अपनी तोतली ज़बान में जवाब देती कि हम इंसान हैं तो वो उसे मज़ीद छेड़तीं और कहतीं कि नीलम तुम इन सान हो। अब बड़ी हो कर वही इंसान नीलम बहुत बड़ी डॉक्टर है और इंटरनेशनल नैस्नोटॉलोजी फ़ोरम की चेयरपर्सन है और देश-विदेश की इंसानियत की ख़िदमत कर रही है। अब यहां मेरा एक बहुत बड़ा ख़ानदान है। मेरी बीबी है, मेरी दो लड़कियां हैं, दो दामाद हैं जो बेटों की तरह मुझ से प्यार करते हैं। तीन दोहते और एक दोहती है। एक बेटा और एक बहू। उनके आगे दो पोते हैं। बाक़ी रिश्तेदारों और दीगर अज़ीज़ून और अहबाब को मिला कर बहुत ही विशाल परिवार है लेकिन **1950** को जिस अटल सरहद को पार कर के मैं इधर आया था वहां मेरा इस से भी विशाल परिवार है जिनको मैं अब तक भुला नहीं सका हूं लेकिन अफ़सोस ये है कि इन सत्तावन सालों में सिर्फ़ दो बार ही उनसे मुलाक़ात करने जा सका हूं, एक बार **1989** में सिर्फ़ **15** दिन के लिए और दूसरी बार अब सिर्फ़ तीन दिन के लिए, वो भी इस्लामाबाद ही जा सका। अब मैं **81** साल की उम्र को पार कर चुका हूं, और ये इंसानी फ़ितरत का तक़ाज़ा ही नहीं बल्कि ये कुदरत का क़ानून भी है कि इंसान अपनी ज़ादबूम से बेपनाह लगाव और मुहब्बत रखता है, उसमें जिस्मानी दूरी इस लगाव को मज़ीद मजबूत करती है। ज़िंदगी भर की तगो-दौ और हंगामा आराई में अगर कोई चीज़ कमो-बेश सुकूने-कल्ब देती है तो वो आबाई वतनकी याद है, उस के बचपन का ज़माना, बचपन के साथी और बचपन की

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

मासूम दुनिया। आइंदा मेरी मुलाक़ात अपने उन अज़ीज़ और अहबाब से कब होगी जो क़िस्मत की रेखाओं की तरह अटल लकीरों की सरहद के उस पार रह रहे हैं जिसको मैं आज ही पार कर के आया हूं, ये तो मेरा ख़ुदा ही बेहतर जानता है। हां, अलबत्ता जो तरीक़ा-ए-कार यूरोपी यूनियन के मुमालिक में राइज है जिसकी रू से वो सिर्फ़ अपना पासपोर्ट ले कर यूरोपी यूनियन के किसी भी मुल्क में बग़ैर किसी रुकावट और वीज़ा के आ-जा सकते हैं, अगर ऐसा ही कोई तरीक़ा-ए-कार यहां भी राइज हो सके तो हमारी मुश्किलें भी आसान हो सकेंगी। मेरे इन ख़यालात का ताना-बाना उस वक़्त मुन्क़ता हो गया जब गाड़ी जालंधर स्टेशन पर रुकी और कुछ मुसाफ़िर हमारे केबिन में दाख़िल हुए।

दिल्ली वापस पहुंच कर मैं जल्द ही डॉक्टर गोपाल कृष्ण चड्ढा साहब से मिलने गया। वो जवाहर लाल नेहरू यूनिवर्सिटी के साबिक़ वाइस चांसलर हैं और इस वक़्त वो प्रधान मंत्री की माली सलाहकार काउंसिल के रुक्न हैं। वो मेरी ज़ादबूम मुज़फ़्फ़राबाद से आठ किलोमीटर के फ़ासले पर घोड़ी नाम के गांव के मायानाज़ और होनहार सपूत हैं। वो सात साल के थे जब वो वहां से हिजरत कर के हिंदुस्तान आए थे। उन के ज़हन में वहां के अपने मुसलमान भाइयों की मज़हबी रवादारी और भाई चारे का जज़्बा जो एक मिसाल है अभी तक मौजूद है जिसको 1947 के मज़हबी जुनून की आग ने आनन-फ़ानन तहस-नहस कर दिया था। उनकी यादों में उस वक़्त दिल दहला देने वाली वहशत का जुनून जिसने उनके गांव में मार-काट का बाज़ार गर्म कर रखा था जिसकी लपेट में उनके वालिद और चाचा को भी अपनी जान से हाथ धोना पड़ा था, अभी तक मौजूद है। हिंदुस्तान आ कर उनको भी अपनी बहाली के लिए अनथक जद्दोजहद करनी पड़ी थी।

अप्रैल 2005 में जब वो जवाहरलाल नेहरू यूनिवर्सिटी के वाइस चांसलर थे उनको पाकिस्तान की ज़ौज यूनिवर्सिटियों और दीगर इदारों की जानिब से अपनी ज़ौजा के साथ वहां आने की दावत मिली थी। इस दावत को क़ुबूल करते हुए वो 9 अप्रैल को लाहौर पहुंचे थे जहां उनका वालेहाना इस्तेक़बाल हुआ था। वहां से वो रावलपिंडी, इस्लामाबाद और पेशावर भी तशरीफ़ ले गए थे। उन्होंने बहुत से मुम्ताज़ इज्तेमाआत से भी ख़िताब किया था। उनकी हर जगह ख़ातिरख़्वाह आवभगत हुई।

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

उनके इस सफ़र में सब से ज़्यादा दिलसोज़ मंज़र उस वक़्त उनको दिखाई दिया जब वो अपनी जन्मभूमि से बोसो-किनार होने के लिए घोड़ी पहुंचे थे जहां उनका कयाम बिल्कुल मुख़्तसर सिर्फ़ पांच घंटे के लिए था। फिर भी ये एक अज़ीम यादगार लम्हा था जब वो अट्ठावन साल पहले बिछड़े हुए अपने गांव वालों से मिले। उन्हें ऐसा महसूस हो रहा था कि वो इतने दराज़ अर्से के वक़्फ़े के बाद नहीं मिल रहे हैं बल्कि वो हमेश से ही उनके अंग-संग थे। इस मंज़र ने उनके दिल पर एक गहरी छाप छोड़ी थी। गांव का हर फ़र्द उनसे मिल कर अज़ हद मुसर्रत महसूस कर रहा था और उनसे इस बात का इज़्हारे-हमदर्दी कर रहा था कि वो उनके ख़ानदान के निहायत ही नज़दीक थे। वो उनके वालिद साहब बल्कि उनके दादा जी के नाम को भी बख़ूबी जानते थे।

उनकी आमद की सब से ज़्यादा ख़ुशी ख़्वाजा साहब को हुई जो उनके वालिद के जिगरी दोस्त ही नहीं थे बल्कि उनके साथ हकीकी भाइयों की तरह रहे थे। चड्ढा साहब की हमशीरा की शादी जो **1944** में हुई थी, उसकी सभी रुसूमात ख़्वाजा साहब ने अंजाम दी थीं, जैसा कि उनके गांव का रिवाज था कि हर हिंदू लड़की की शादी में मुसलमान भाई पूरी तरह शामिल होते थे और मुसलमान लड़की की शादी में हिंदू भाई ये फ़र्ज़ अदा करते थे।

उन्हें वहां ऐसा महसूस हो रहा था कि अट्ठावन साल का अर्सा बिल्कुल काफ़ूर हो गया है। उनके बचपन के साथी उन्हें जूक़ दर जूक़ मिलने आ रहे थे और उनसे मिलकर ख़ुशी और फ़ख़्र महसूस कर रहे थे कि उनका बचपन का एक साथी ज़िंदगी का बुलंदतरीन मुकाम हासिल करने में कामयाब हुआ है। उनको वहां अपने बचपन की हसीन यादें ताज़ा हो आई थीं। ऐसी दिलकश यादों के उभर आने से जो दिलसोज़ मंज़र पैदा होता था उसको देख कर उनके साथ वहां लगे हुए पाकिस्तानी पुलिस के सिक्योरिटी गार्ड भी अपने आंसू रोक नहीं पाते थे।

उनके लिए सबसे ज़्यादा यादगार लम्हा तब था जब ख़्वाजा साहब उनकी ज़ौजा बमय बाकी अफ़रादे-ख़ाना उनके लिए शानदार और निहायत ही लज़ीज़ नाश्ते का एहतेमाम करने के लिए घोड़ी से चल कर मुज़फ़्फ़राबाद गवर्मेंट गैस्ट हाउस तशरीफ़

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

लाए थे। ये कोई आम नाश्ता नहीं था बल्कि एक फ़रहतबख़्श रिवायती नाश्ता था जिसका ज़ायका उनके ज़हन में अभी तक ताज़ा था।

चड्ढा साहब को मलाल और अफ़सोस है कि उन्होंने अपने बचपन के ज़माने की खोज करने में अट्ठावन बरस तक क्यों इंतज़ार किया। लेकिन फिर भी वो निहायत ही ख़ुशकिस्मत हैं कि उन्होंने वक़्त रहते अपनी ज़ादबूम की ज़ियारत कर ली वर्ना उसके छह माह बाद ही ये नेस्तो-नाबूद हो गई।

G.M. College of Education
Raipur, Bantalab
Jammu
Acc No. 5352
Dated. 29/3/2024

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant

Gandhi Memorial College Of Education Bantalab Jammu

Charanjit Lal Sehgal was born in the border town of Muzaffarabad on April 22, 1926. He received his school education there and did his B.Se. from th e PU. Lahore in 1946 where he was appointed Sr. Science Master up to 1947. After partition he worked as Head Master, High School Muzaffarabad, the Capital of the Pok upto 1950.

After coming to India he remained engaged in social welfare activities when he joint Govt. service as executive officer in J & K KVI Board in 1970 and retired as Joint Director Handicrafts in 1982. He was fond of reading and writing from the very beginning and his many articles were published in different periodicals. After his retirement from service he engaged him self writing books. His many books have been published in Urdu, Hindi and English out of which *Vedic Adahad Study of Tantra, Mystic Way of Life, Dastan Hazar Din* are extraordinary.

चरणजीत लाल सहगल

309 - A, Gandhinagar
Jammu Tawi - 180 004
(Jammu & Kashmir)

Phone : 2430836, Mobile : 9469012230

CC-0 Agamnigam Digital Preservation Foundation,Chandigarh.Funding by IKS-MoE-2025-Grant